एक वर्ष

(एक मनोरंजक उपन्यास)

लेखक
विपिन कुमार बन्धोपाध्याय

प्रकाशक
मनोरमा प्रकाशन गृह
नई दिल्ली

एक वर्ष

१

सुनील बम्बई में पढ़ रहा था। बी० ए० की परीक्षा देने के लिए वह तैयारी कर रहा था, इतने में पिता की बीमारी का तार मिला। इससे वह तुरन्त ही देश की ओर चल पड़ा। जब वह घर पहुँचा तब उसके पिता की मृत्यु हो चुकी थी और एक अपार सम्पत्ति का वही एकमात्र उत्तराधिकारी बन बैठा। पिता का क्रिया-कर्म करके उसने अपनी समस्त सम्पत्ति का समुचित प्रबन्ध कर लिया, तब वह निश्चिन्त होकर बैठा। हाथ में वैसा कोई काम-काज था नहीं, इससे समय व्यतीत करना उसके लिए बहुत कठिन हो रहा था। इधर उसकी मानसिक अवस्था भी वैसी नहीं थी कि मनोरंजन की कोई सामग्री एकत्र करके वह उसी में अपना मन लगाता।

एक दिन वह एक आराम-कुर्सी पर लेटा हुआ था। सामने खिड़की खुली थी। उसी से वह खिन्न दृष्टि से शून्य आकाश की ओर ताक रहा था। किन्तु किसी खास चीज पर उसकी दृष्टि नहीं थी। अपनी इच्छा के ही अनुसार वह निरुद्देश्य-भाव से ताक रहा था।

थोड़ी देर के बाद कमरे में किसी के दाखिल होने की आहट मिली। परन्तु कौन आया, यह देखने के लिए उसमें ज़रा भी कौतूहल का लक्षण नहीं मालूम हुआ। आकाश की ओर ताकता हुआ जैसे वह लेटा था, वैसे ही लेटा रह गया। घर में उसके थोड़े से नौकरों के अतिरिक्त अपना कोई था नहीं। माता की उसके बहुत दिन पहले ही मृत्यु हो चुका थी। भाई-बहन कोई था नहीं। विवाह भी उसका नहीं हुआ था। कमरे में जिस किसी ने प्रवेश किया हो, वह कोई मित्र या बाहरी आदमी नहीं

है, यह उसने इसी से समझ लिया कि आगन्तुक के पैरों में जूते नहीं थे इसलिए उसकी ओर ताकने की आवश्यकता उसने नहीं समझी।

सुनील की कुर्सी के पास एक छोटी-सी मेज़ थी। उसी के ऊपर थोड़ी-सी पत्र-पत्रिकायें और चिट्ठियाँ आदि रखकर नौकर चला गया।

डाक को देखने के लिए सुनील ने सारे कागज़-पत्र उठा लिये और एक-एक करके वह उन सब पर दृष्टि दौड़ाने लगा। सारी डाक देख लेने के बाद उसने नीले रंग का एक मोटा-सा चौकोर लिफाफा उठाया और उसी को सबसे पहले खोलकर चिट्ठी निकालने लगा। लिफाफे पर जिस ओर पता लिखा था उसके दूसरी ओर एक मकान का चित्र और 'मोटो' नीले रंग की रोशनाई से एम्बस करके छपा हुआ था। कागज काटने की हाथी दाँत की छुरी से लिफाफे को काटते-काटते उसी चित्र और मोटो को वह देखने लगा—चित्र भारत की प्राचीन स्थापत्य-कला के अनुसार बने हुए एक दुर्ग-जैसे एक मकान का था। वह मकान जंगल में था और अगणित पेड़-पौधों से ढका था। चित्र के ऊपर देव-नागरी अक्षरों लिखा था—गुप्त महल।

सुनील ने लिफाफ़े के भीतर से चिट्ठी निकाल ली। तब उसने देखा कि जो चित्र और मोटो लिफाफे पर छपा हुआ है, वही ऊपर की ओर चिट्ठी के कागज पर भी एक किनारे पर छपा है। एक दूसरे किनारे पर छपा था हरिसन रोड कलकत्ता। हरिसन रोड में सुनील का एक मित्र चित्रगुप्त अधिकारी रहा करता था बम्बई में उससे एक बार सुनील की मित्रता हुई थी। चित्रगुप्त ने बम्बई यूनिवर्सिटी से बी० ए० पास करके कलकत्ते में रहने लगा चित्रगुप्त के पिता चन्द्रगुप्त अधिकारी कभी जज थे और अब पैंशन लेकर आराम कर रहे थे। कलकत्ता में उन्होंने एक पुराना मकान खरीद लिया था और वहीं वे रहने लगे थे। चित्रगुप्त ने सुनील को लिखा था—

"प्यारे सुनील, डिगरी लिये बिना ही तुम्हें एकाएक पढ़ाई छोड़नी पड़ी। इधर तुम्हारे पिता की मृत्यु भी हो गई। यह जान कर मैं बहुत

ही दुःखी हुआ हूं। लौटकर आने पर तुम अपने पिता को नहीं देख पाये हो, यह बड़े ही दुःख की बात है। परन्तु डिगरी जो तुम नहीं पा सके, इसलिए दुःखी होने की कोई बात नहीं है, क्योंकि तुम्हें तो अब डिगरी दिखा कर नौकरी के बाज़ार में उम्मीदवारी करते फिरना न पड़ेगा।

"नौकरी से पेंशन लेकर पिता जी ने निश्चित रूप से इसी देश में रहना आरम्भ कर दिया है। इसीलिए उन्होंने यहाँ महलनुमा मकान भी खरीद लिया है। यह मकान क्या है, एक छोटा-मोटा किला है। यह मकान पत्थर का है और भारत की प्राचीन स्थापत्यकला के अनुसार इसका निर्माण हुआ है। इसमें कितने टेढ़े-मेढ़े गुप्त रास्ते हैं, इसका कोई ठिकाना नहीं है। मकान क्या है, यह एक प्रकार का गोरख-धन्धा है। इसमें एक सुरंग भी थी, परन्तु पता नहीं कब किसने इस सुरंग का द्वार बन्द करवा दिया है। इस महल से एक सुरंग गंगा नदी तक और एक नर्मदा नदी तक चली गई है। "यह मकान किस मुसलमान या मराठा राजा का बनवाया हुआ है, यह बात अब ठीक-ठीक नहीं मालूम हो पाती। इस देश के हिन्दू और मुसलमान प्रधानता प्राप्त करने के लिए निरन्तर जो संघर्ष करते रहते थे उसके कारण राजाओं का जीवन ऐश्वर्य तथा उनकी स्वाधीनता इतनी अनिश्चित रहा करती कि उन्हें समय-समय पर अपने आप को छिपाने की आवश्यकता पड़ा करती थी। यह महल सम्भवतः उन्हीं में से किसी के छिपे रहने का अड्डा था। भारत के पुरातत्त्व-विभाग की ओर से इस मकान के सम्बन्ध में कभी किसी प्रकार का अनुसंधान हुआ है या नहीं, यह नहीं मालूम है। किसी प्रसिद्ध पुरातत्त्ववेत्ता को निमन्त्रित करके इस सम्बन्ध में पूछ-ताछ करने का विचार है। दो स्थानों पर फारसी अक्षरों में कुछ लिखा है, उसे भी पढ़ना है। आज-कल मैं फारसी सीख रहा हूँ।"

"तुम्हें तो आजकल कोई काम है नहीं। तुम एक बार हमारा यह महल देख न जाओ। तुम तो इतिहास के विद्यार्थी हो। इसमें से इतिहास की कोई सामग्री खोज सकोगे। पिता जी तथा माता जी से मैंने

तुम्हारी चर्चा की थी। वे बड़े आदर से तुम्हें निमन्त्रित कर रहे हैं। तुम्हारे यहाँ आने पर इन सबसे भी अधिक मनोहर और कौतूहल उत्पन्न करने वाली एक और वस्तु मैं तुम्हें दिखलाऊँगा। उसके सम्बन्ध में अभी मैं तुम्हें कुछ बतलाऊँगा नहीं। उसे मैं तुमसे अभी इसलिए छिपा रखता हूं कि एकाएक जानकर विस्मय-जनित आनन्द का उपभोग कर सको। अभी मैं केवल इतना ही बतलाऊँगा कि उसका नाम प्रमिला है और उसका रूप और गुण अपरिमित हैं।

"इस घर में जिस दिन मैं आया हूं, उस दिन से बराबर कल्पना के एक आनन्दमय लोक में ही विचरण कर रहा हूँ। यह कल्पना इतनी मादकमय है कि मैं रात दिन आनन्द में ही मग्न रहता हूँ। इस आनन्द का उपभोग करने के लिए मैं तुम्हें निमन्त्रित कर रहा हूं। तुम शीघ्र चले आओ। सूचना मिलने पर मैं टैक्सी लिये हुए स्टेशन पर उपस्थित रहूंगा। मेरा मकान स्टेशन से अधिक दूर नहीं है। चार-पांच मील होगा।

तुम्हारा—चित्रगुप्त

२

गरीब की कामना की यदि कोई गति हो सकती है तो केवल दुर्गति ही हो सकती है। परन्तु जिनकी कामनारूपी गाड़ी में चाँदी के चक्के और धुरी लगी हो, उनके कामना की गति भला किस प्रकार रोकी जा सकती है ? उनकी कामना तो पूर्णता की ओर अबाध गति से ही बढ़ती चली जाती है सुनील के मनीबेग में चाँदी के टुकड़ों की अधिकता थी ही, इससे मित्र के निमंत्रण की रक्षा के निमित्त दूसरे दिन ही वह कलकत्ता की ओर चल पड़ा। स्टेशन पर पहुँच कर उसने तार से अपनी यात्रा की सूचना चित्रगुप्त को दे दी।

कलकत्ता स्टेशन पर पहुँच कर सुनील ने देखा तो उसका मित्र चित्रगुप्त प्लेटफार्म पर उपस्थित नहीं था। तब उसने सोचा कि चित्रगुप्त शायद और कहीं होगा, इससे गाड़ी से वह उतर पड़ा और इधर-उधर टहलने लगा। किन्तु चारों ओर दृष्टि दौड़ा कर देखने पर भी सुनील चित्रगुप्त को न देख पाया। तब उसने सोचा कि सम्भवतः घर से चलने में ही उसे कुछ विलम्ब हो गया है, और अभी तक वह यहाँ नहीं पहुँच पाया है, इससे कुछ समय तक यहीं पर प्रतीक्षा करनी चाहिए।

गाड़ी रवाना हो जाने पर स्टेशन मास्टर साहब ने सुनील से पूछा—हुजूर कहाँ जायेंगे ? क्या मैं किसी प्रकार की सेवा कर सकता हूँ ?

सुनील ने कहा—मैं हरीसन रोड जाऊँगा।

स्टेशन मास्टर ने कहा—ओह शायद, आप महल जायँगे।

सुनील—हाँ, वहाँ मेरे एक मित्र रहते हैं।

स्टेशन मास्टर ने पूछा—चित्रगुप्त बाबू किशोर बाबू ?

सुनील ने कहा—चित्रगुप्त मेरे मित्र हैं। किशोर उनका छोटा भाई है। तो शायद आप उन्हें जानते हैं।

स्टेशन मास्टर ने कहा—वे लोग तो बहुत बड़े आदमी हैं। इधर आस-पास के भू-भाग में कौन ऐसा आदमी है, जो उन्हें नहीं पहचानता ? वे सदा स्टेशन पर आते-जाते रहते हैं, इससे मेरी भी उनसे जान-पहचान हो गई है। क्या आपने अपने आने की सूचना उन्हें नहीं दे रक्खी है ?

सुनील—मैंने तो चलते समय टेलीग्राम कर दिया था। चित्रगुप्त ने लिखा भी था कि पहले से सूचना मिलने पर मैं टैक्सी लिए हुए स्टेशन पर खड़ा रहूँगा।

स्टेशन मास्टर ने कहा—तो वे अब आते ही होंगे। तब तक आप मेरे आफिस में चल कर बैठिए।

सुनील स्टेशन मास्टर के साथ-साथ उसके आफिस में गया। कुली लोग भी जाकर वहीं उसका सामान रख आये।

सुनील स्टेशन मास्टर से बातचीत कर रहा था, किन्तु दृष्टि उसकी बाहर की ही ओर लगी रहती। धीरे-धीरे विलम्ब अधिक हो गया, किन्तु इतनी प्रतीक्षा के बाद भी चित्रगुप्त दिखाई न पड़ा। तब तो सुनील चिन्तित हो उठा। उसने सोचा—सम्भव है कि चित्रगुप्त कहीं अन्यत्र चला गया हो, या उसकी तबियत खराब हो गई हो, जिससे कि यहाँ आने में वह असमर्थ हो। इससे स्टेशन मास्टर से उसने कहा कि आप कृपा करके मुझे दो कुली दे दीजिए, मैं धीरे-धीरे चलूँ। रास्ते में यदि चित्रगुप्त की टैक्सी मिल जायगी तब तो अच्छा ही है, अन्यथा केवल पाँच ही मील की तो बात है। पैदल ही चला जाऊँगा। नई जगह में आया हूं। इधर की स्थिति का अभी मुझे कुछ ज्ञान नहीं है, साथ ही रात भी अँधेरी है। इससे दिन रहते-रहते पहुँच जाना ही अच्छा है। दो कुलियों के सिर पर अपना सामान रखकर सुनील हरिसन की ओर चला।

चलते-चलते सुनील चित्रगुप्त के मकान के फाटक पर पहुंच गया कोठी के चारों ओर बहुत ऊँची चहार दीवारी थी। उस चहारदीवारी के बाहर दीवार से बिलकुल भिड़ाकर पेड़ लगा दिये गये थे। वे पेड़ भी बहुत ऊँचे-ऊँचे थे और इतने घने लगे थे कि उनके तने आपस में मिल कर बेड़ा-सा बना लिए थे और इससे समीप आ जाने पर भी आसानी से यह नहीं मालूम हो पाता था कि यहाँ कोई मकान है। फाटक पर पहुँच जाने पर सुनील भी यह नहीं समझ सका कि चहारदीवारी के भीतर का मकान कितना बड़ा है। लोहे से दृढ़तापूर्वक जड़ा हुआ बड़ा सा कपाट खुला था। डयोढ़ीदार वहाँ कोई था नहीं। कपाट के ऊपर जो मेहराब था, उस पर लड़की के एक बड़े से चक्के में एक मोटा-सा सँकड़ा लगा था और वही सँकड़ा दो भागों में विभक्त करके कपाट के दोनों पल्लों से लोहे के मोटे मोटे चुल्ले लगाकर जोड़ दिया गया था। यह देखकर सुनील समझ गया कि यह चक्का घुमाकर रात्रि में या विपत्ति के समय यह कपाट बन्द किया जा सकता है। फाटक से घर तक जाने के लिए जो मार्ग था उसके साथ-साथ ऊँची-ऊँची दीवारें उठी हुई थीं। इसके सिवा जगह-जगह से वह रास्ता इस प्रकार घुमाकर दिया गया था कि जरा ही दूर आगे बढ़ कर ऊँची दीवार में दृष्टि रुक जाती। कोने पर जो मोड़ थी उसके बाद क्या है, और कितनी दूर चलकर हम मकान तक पहुँच सकेंगे यह कुछ ठीक-ठीक मालूम नहीं हो पाता था।

उस टेढ़े-मेढ़े रास्ते से सुनील आगे बढ़ने लगा। ठीक सामने चलते चलते एकाएक उसे कभी इस ओर घूमना पड़ता कभी उस ओर घूमना पड़ता और कभी मोड़ पर से एकदम घूमकर फिर पीछे की ही ओर लौटना पड़ता। इस गोरखधन्धे में काफी देर तक भटकते भटकते वह एक छोटे से दरवाजे के पास पहुँचा। वह दरवाजा भी चारों ओर से दीवार से घिरा हुआ था। उस दरवाजे को पार करते ही सुनील एक बहुत बड़े अहाते में पहुँचा। अहाते के बीच में किला जैसा एक बहुत

बड़ा और ऊँचा मकान बना हुआ था। वह मकान नीचे से ऊपर तक पत्थर से ही बना था। वह अहाता भी एक प्रकार से जंगल ही था क्योंकि उसमें खूब ऊँचें-ऊँचे वृक्षों की भरमार थी। उन वृक्षों के बीच-बीच में जहाँ कहीं जगह मिलगई थी, वहीं थोड़े-बहुत देशी और विलयाती फूल लगा दिये गये थे वे फूल हाल के ही लगे हुए मालूम पड़ते थे।

इतना लम्बा-चौड़ा अहाता था और इतना बड़ा मकान था! परन्तु वहाँ कहीं आदमी का नाम तक नहीं था। वह सारा मकान एक उजाड़ दैत्यपुरी के समान सूना पड़ा-पड़ा खाने को दौड़ता था। मकान के सामने खूब चौड़ी और ऊँची-सी जो सीढ़ी बनी थी, उस पर से होकर सुनील ऊपर चढ़ गया। दरवाजे की चौखट के उस पार उसके पैर रखते ही एक बंगाली नौकर दौड़ता हुआ आ पहुंचा। सुनील को बिना किसी प्रकार का अभिवादन किये ही व्यग्र-भाव से उसने पूछा—कोई खबर मिली है क्या आपको ?

इस प्रश्न का कोई अर्थ सुनील की समझ में न आ सका। उसने कहा—मैं चित्रगुप्त का मित्र हूँ, बम्बई से आ रहा हूं। उन्होंने मुझे यहाँ आने के लिए लिखा था।

एक लम्बी साँस लेकर नौकर बोला—ओह!

इतने पर भी नौकर के रंग-ढंग से कुछ यह न मालूम पड़ा कि वह सुनील की किसी प्रकार की आवभगत करना अपना कर्त्तव्य समझता है। यह देख कर सुनील ने पूछा—चित्रगुप्त कहाँ है ? क्या तुम उन्हें ज़रा खबर दे दोगे ?

उत्साहहीन होकर नौकर ने कहा—मँझले साहब घर मे नहीं हैं। छोटे साहब भी बाहर गये हुए हैं। केवल बड़े साहब और मेम साहब हैं। आप मेरे साथ चलिए।

३

सुनील को साथ में लिये हुए नौकर दोमंजिले पर गया। सीढ़ी के पास ही एक कमरे के द्वार पर खड़ा होकर उसने सुनील से कहा—साहब इसी कमरे में हैं।

सुनील ने कमरे में प्रवेश किया। कमरा वह बहुत बड़ा था और उसमें जो वस्तुएं सजी हुई थीं, वे भी बहुमूल्य थीं। सजावट का ढंग विलायती था। कमरे के बीच में सफेद पत्थर का एक बड़ा-सा टेबिल था। उसी पर हाथ फैलाये तथा मस्तक झुकाए हुए एक वृद्ध पुरुष, जिनके मस्तक के बाल सफेद हो गये थे, कुर्सी पर बैठे हुए थे। उनकी बग़ल में एक लम्बी-सी एकहरे बदन की सुन्दरी रमणी खड़ी थी, जो न बिल्कुल तरुणी थी और न वृद्धा थी। उसके खुले हुए लम्बे-लम्बे बाल लटक रहे थे। दूर से देखने पर जान पड़ता कि मानो किसी ने इस सुन्दरी की पीठ तथा दोनों भुजाओं पर स्याही की धारा बहा दी है। आँखें उसकी बड़ी-बड़ी और खूब उज्जवल थीं। उसकी दृष्टि से मानों क्रूरतापूर्ण स्वार्थपरायणता चारों ओर बिखर रही थी। इन दोनों मूर्तियों को देखते ही सुनील ने समझ लिया कि ये वृद्ध महानुभाव चित्रगुप्त के पिता चन्द्रगुप्त बाबू हैं और ये महिला उसकी विमाता तथा किशोर की माता हैं। इनका नाम है अन्नपूर्णा।

इन पति-पत्नी की ओर दृष्टिपात करते ही सुनील ने समझ लिया कि इनका चित्त काफी प्रसन्न नहीं है। उसने यह भी समझ लिया कि चन्द्रगुप्त बाबू के मन में जितना अधिक विषाद का भाव है, उतनी व्यग्रता अन्नपूर्णा को नहीं है। अन्नपूर्णा के मुख-मण्डल पर दुःख का भाव थोड़ा-बहुत वर्तमान है अवश्य, किन्तु उसके साथ ही विजय से

उत्पन्न हुए एक प्रकार के सन्तोष का भाव भी उस दुःख के भाव के साथ ही सम्बद्ध है। यह बात अन्नपूर्णा की आकृति देखते ही स्पष्ट रूप से मालूम पड़ रही थी। यह देखकर सुनील ने अनुमान किया कि कदाचित इन पति-पत्नी में किसी बात पर थोड़ा-बहुत विवाद हो गया है, इसीलिए ये दुःखी हैं। इनकी उद्विग्नता का सम्भवतः इसके अतिरिक्त और कोई विशेष कारण नहीं है। तरुणी भार्य्या होने पर वृद्ध की जो दशा हुआ करती है, वही इनकी भी हो रही है। इस असम द्वन्द्व में वृद्ध की पराजय और तरुणी की विजय होना अवश्यम्भावी ही है। यही सब सोचते-सोचते सुनील बढ़ता हुआ कमरे में चला गया। उसने उन पति-पत्नी को प्रणाम करके कहा—चित्रगुप्त का मैं मित्र हूं। उन्होंने मुझे बुलाया था।

अपना मुरझाया हुआ मुख ऊपर उठाकर चन्द्रगुप्त बाबू ने कहा—हाँ जानता हूं। परन्तु यह नहीं मालूम था कि तुम आज ही आ जाओगे अच्छा बैठो बेटा, बैठो।

एक कुर्सी खींचकर सुनील बैठ गया। उसने कहा—चलने से पहले मैंने तार दे दिया था। क्या उन्हें वह तार मिला नहीं?

दुःखी-भाव से चन्द्रगुप्त बाबू ने कहा—शायद मिला हो उसे!

सुनील चन्द्रगुप्त बाबू की इस बात का भाव हृदयंगम नहीं कर सका। वह सोचने लगा कि किसी घरेलू विषय पर अवश्य इन लोगों में कुछ विवाद हुआ है, इससे आपस में मनमुटाव भी हो गया है। यह सोच सुनील बड़े असमंजस में पड़ गया। उसके मन में यह बात आई कि बड़े असमय में आया हूँ मैं इनके यहाँ। मित्र से यदि मुलाकात हो जाती तब भी सुनील थोड़ी-बहुत शान्ति का अनुभव कर पाता। किन्तु चित्रगुप्त तो कहीं दिखाई नहीं पड़ रहा था। सुनील ने चन्द्रगुप्त से पूछा—चित्रगुप्त कहाँ हैं? क्या वे घर में नहीं हैं?

एक लम्बी सांस लेकर चन्द्रगुप्त ने बहुत ही कतार-स्वर से कहा—भगवान जाने वह कहां है?

चन्द्रगुप्त का भाव तथा उनकी बातों का अर्थ सुनील की समझ में न आया। अवाक् होकर वह उसके मुँह की ओर ताकता बैठा रहा।

सुनील को विस्मितभाव से ताकते देखकर अन्नपूर्णा ने कहा—हम लोग बड़े संकट में पड़े हैं। कल दोपहर को एकाएक चित्रगुप्त न जाने कहाँ भाग गया। अभी तक उसका कहीं पता नहीं चल सका है।

अन्नपूर्णा की इस बात ने सुनील को आश्चर्य में डाल दिया। उसने विस्मयपूर्ण स्वर से कहा—भाग गया है ?

"चित्रगुप्त भाग गया है," इस बात पर सुनील को मानो विश्वास ही नहीं हो रहा था।

चन्द्रगुप्त ने भर्राई हुई आवाज में कहा—भाग गया है, यह ठीक ठीक नहीं कहा जा सकता। यह तो मानो एकाएक अदृश्य हो जाना है। यह एक ऐसा रहस्य है, जिसे हृदयंग करने में बुद्धि नहीं काम देती।

सुनील ने चित्रगुप्त की विमाता के मुँह की ओर एक बार ताक लिया। बाद को जरा-सा इधर-उधर करके उसने पूछा—क्या कोई ऐसा कारण उपस्थित हो गया। जिससे चित्रगुप्त छोड़ कर चल गया है ?

शोक से अधीर पिता ने व्यथापूर्ण स्वर से कहा—यही तो और भी आश्चर्य की बात मालूम पड़ती है। यदि कोई ऐसी घटना हुई होती जिससे कि उसके घर छोड़कर चले जाने या जरा भी रुष्ट होने की सम्भावना होती तब कोई बात ही नहीं थी। इसके सिवा क्रोध में आकर घर से निकाल भागना उसके स्वभाव के बिल्कुल विपरीत है। इस प्रकार के स्वभाव का लड़का तो वह है नहीं कि कोई ऐसा कार्य कर बैठे, जिससे हम लोग दुःखी हों या हमारे सामने किसी प्रकार की चिन्ता का कारण उपस्थित हो। इसीलिए हमारे मन में और भी आशंका उत्पन्न हो रही है। और उसके अमगंल के भय से हम अधीर हो उठे है।

इस घटना का क्या कारण हो सकता है, यह बात सुनील की समझ में न आ सकी। परन्तु फिर भी चिन्ताग्रस्त माता-पिता को सान्त्वना

देने के भाव से उसने कहा—अभी कल से ही तो उनका पता नहीं चल रहा है ? इसके लिए अधीर होने की कौन-सी बात है ? सम्भव है कि कुछ आगे बढ़ कर मुझसे मुझसे मिलने के ही लिए वे कहीं चले गये हों और गाड़ी में मुलाकात न हो सकने के कारण कहीं पीछे पड़े रह गये हों। सम्भवत: आज या तो वे स्वयं आ जायेंगे, या उनका कोई पत्र या तार आवेगा।

निराशा का भाव व्यक्त करते हुए मस्तक हिलाकर चन्द्रगुप्त ने कहा—मुझे तो कोई ऐसी सम्भवना मालूम नहीं पड़ती। कल दोपहर को भोजन-आदि से निवृत होकर वह इसी कमरे में बैठा हुआ कलकत्ते के इतिहास की कई अच्छी-अच्छी पुस्तकें देख रहा था। आकर मैं भी उसके सामने बैठ गया। तब मुस्कराते हुए उसने मुझसे कहा—इतिहास में खोजकर देखता हूँ कि कहीं इस मकान का कुछ उल्लेख है या नहीं। मैंने उससे कहा कि आर्कोलजिकल डिपार्ट ने खोजों की जो रिपोर्टें निकाली हैं, उन्हें जरा ध्यान से देख लो। इतने में उसकी मा कमरे में आई.........

अन्नपूर्णा ने कहा—हाँ, यहाँ आकर मैंने जब देखा कि तुम लोग बातें कर रहे हो, तब मैं लौट गई।

चन्द्रगुप्त ने कहा—ये जैसे ही कमरे से निकलीं, वैसे ही वह भी कुर्सी से उठ पड़ा। कमरे से निकलकर जाते-जाते उसने कहा—दक्षिण ओर की गुम्बज में फारसी अक्षरों में कुछ लिखा हुआ-सा मालूम पड़ता है। सफेदी के नीचे अक्षर दबे हुए हैं। उस जगह का चूना खरोंचकर जरा मैं देख आऊँ कि वहाँ चिन्ह जो मालूम पड़ते हैं, वे वास्तव में कोई अक्षर हैं या नहीं। यदि वहाँ कोई लेख हुआ तब तो उसकी सहायता से इस मकान के खोये हुए इतिहास का उद्धार किया जा सकेगा यह कहकर वह चला गया। मेरी धारणा थी कि वह शीघ्र ही लौट आवेगा, इससे मैं इसी कमरे में बैठा रह गया। उसके लौटने में विलम्ब होते देखकर मुझे यह जानने का कौतूहल हुआ कि वह क्या कर

रहा है। इससे मैं भी उस गुम्बज की ओर गया; किन्तु वहाँ वह मुझे दिखाई न पड़ा। यह सोचकर कि वह और कहीं चला गया होगा, मैं अपने कमरे में चला गया। साँझ को जलपान के लिए भी वह न आया तब मैंने उसे बुलाने के लिए आदमी भेजा। पता चला कि वह घर पर नहीं है। उस समय तक मुझे किसी प्रकार भी आशंका या सन्देह नहीं हुआ। मेरे मन में यह बात आई कि वह कहीं चला गया होगा, थोड़ी देर में आ जायगा। परन्तु रात्रि में भोजन के समय भी जब वह न दिखाई पड़ा, तब मुझे चिन्ता हुई। हम दोनों आदमी और नौकर-चाकर सब मिलकर सारा घर, बगीचा तथा बाहर का जंगल तक, एक-एक जगह खोजकर देख आये। परन्तु उसका कहीं पता नहीं चल सका। अभी तक बराबर खोज हो रही है। वह गाड़ी से कहीं गया है या नहीं, यह जानने के लिए एक घुड़सवार को मैंने स्टेशन भेजा है।

सुनील ने कहा—हाँ, आते समय मैंने देखा था कि एक आदमी घोड़ा दौड़ाता हुआ स्टेशन की ओर जा रहा है।

सुनील के साथ चित्रगुप्त की बड़ी घनिष्ठ मित्रता थी। अपने मित्र से वह बहुत ही प्रेम किया करता था। इससे मित्र के अकस्मात् अदृश्य हो जाने के कारण सुनील बहुत दुःखी और चिन्तित हुआ। उसे उसके लिए बड़ी आशंका होने लगी। वह मित्र के सम्बन्ध में चन्द्रगुप्त तथा अन्नपूर्णा से तरह-तरह के प्रश्न करने लगा। चन्द्रगुप्त पुत्र-शोक से इस प्रकार विह्वल हो उठे थे सुनील के प्रश्नों के उत्तर में वे अधिक कुछ कह नहीं पाते थे। मुंह से कोई बात निकालने का प्रयत्न करते ही आँसुओं से उनका कण्ठ-स्वर रुद्ध हो जाता और वे अपने को सँभालने के लिए कितना प्रयत्न करते, किन्तु उनके मुँह से ठीक-ठीक बात न निकल पाती। इससे सुनील के प्रायः सभी प्रश्नों के उत्तर दिये अन्नपूर्णा ने। उसने कहा—चित्रगुप्त तो सदा से ही मुंह छिपाकर कोने में पड़ा रहने वाला आदमी है। वह मनुष्य की अपेक्षा पुस्तकों का साथ अधिक पसन्द करता है। इसलिए उसके साथी-संगी बहुत कम

हैं। उसके पास कोई आता नहीं, वह भी किसी के पास नहीं जाता। आजकल वह भारत का एक बहुत ही खोजपूर्ण इतिहास लिख रहा है। अभी वह पूरा नहीं हुआ है। देखो, उस अधूरी पुस्तक का ही एक पृष्ठ खुला हुआ उसके टेबिल पर पड़ा है। उसके पास ही फाउण्टेन पेन भी जैसी वह छोड़ गया है वैसी ही पड़ी है। परन्तु उसका कोई पता नहीं है।

चित्रगुप्त की विमाता जब ये सब बातें कह रही थीं, तब उनके कण्ठ-स्वर से ममता और दुःख का आभास पाया जाता था, किन्तु सुनील ने जब उनकी दृष्टि की ओर ताका तब नेत्रों में जल का कहीं लेश तक नहीं था। सुनील के मन में यह बात आई कि ऐसी अवस्था को प्राप्त होने पर और कोई स्त्री फूट-फूटकर रोते-रोते व्याकुल हुए बिना न रहती। परन्तु अन्नपूर्णा शिक्षिता स्त्री हैं, इसलिए उन्होंने अपने आपको सँभाल रक्खा है और कदाचित् इस विचार से सँभाल रक्खा है कि एक बाहर से आये हुए अतिथि के सामने यदि मैं रो पड़ूँगी तो बहुत बुरा मालूम पड़ेगा।

अन्नपूर्णा की बातें सुनकर सुनील ने कहा—चित्रगुप्त से मिलने के लिए मैं इतनी दूर तक आया हूँ, उसे खोज निकाले बिना किसी प्रकार भी लौटकर न जाऊंगा। यदि मैं उसे खोजने में आपको कुछ भी सहायता कर सका तो मुझे बड़ा सुख मिलेगा।

चन्द्रगुप्त यह आशा प्रायः छोड़ चुके थे कि मेरा चित्रगुप्त लौटकर फिर मेरे पास आ जायगा। उनके मन में यह धारणा क्रमशः दृढ़ता-पूर्वक जड़ पकड़ती जा रही थी कि चित्रगुप्त अब जीवित नहीं है। तो सुनील की इस बात से उसमें ज़रा-सी आशा का संचार हुआ। उन्होंने कहा—बहुत अच्छा बेटा, बहुत अच्छा। ऐसा ही करो तुम। अपने इस कष्ट और प्रयत्न के बदले में तुम मित्र के वृद्ध और शोक से व्याकुल पिता के आशीर्वाद के अधिकारी होओगे। शैशवकाल के साथ-साथ मनुष्य का परिचय होता है माता-पिता से। वही मनुष्य जब युवा

अवस्था का संग प्राप्त करता है तब उसका परिचय होता है मित्र और स्त्री से। तुम चित्रगुप्त के प्रिय मित्र हो। एक प्रकार से तुम्हीं एकमात्र उसके मित्र हो। उसे तुम आन्तरिक भाव से जानते हो। तुम्हें यह भी मालूम होगा कि उसका झुकाव किस ओर था, कैसी परिस्थिति में किस प्रकार का कार्य करना वह अधिक पसन्द करता था। तुम अपनी इन सब विषयों की जानकारी की सहायता से उसे खोज सकोगे। वह भी तो साधारण युवकों की ही तरह क्षणिक-बुद्धि और चंचल था नहीं। मुझे कोई ऐसा कारण नहीं जान पड़ता, जिससे उसकी अकाल मृत्यु हो गई हो, किसी ने गुप्त रीति से उसकी हत्या कर डाली हो या अकस्मात मस्तिष्क में ही कोई विचार आ गया हो, जिससे वह कहीं छिपकर भाग गया हो।

इतना कह चुकने के बाद चन्द्रगुप्त कुछ अपने आपको और कुछ अन्नपूर्णा को सम्बोधित करते हुए बोले—कल फिर सुनीता आ रही है! आते ही यह दुःसंवाद सुनकर वह बेचारी सूख जायगी। यह एक और दुःख के ऊपर दुःख है!

कुछ झुँझलाहट के साथ कठोर-स्वर से अन्नपूर्णा ने कहा—तुम जितना समझते हो, उतना दुःख उसे न होगा।

यह बात कहते समय अन्नपूर्णा का मुख अद्भुत प्रकार से कठोर हो उठा और उसकी दृष्टि से एक तीक्ष्ण ज्योति विकीर्ण होने लगी। उसके मुख का भाव देखते ही सुनील ने समझ लिया कि यह सुनीता इनको प्रिय नहीं है। इस सुनीता के ही विषय में उसने पत्र में लिखा था—अवश्य वह चित्रगुप्त की प्रेमिका है, उसकी भावी पत्नी है।

पत्नी की बात का प्रतिवाद करते हुए चन्द्रगुप्त ने कहा—तुम्हें यह मालूम नहीं है कि चित्रगुप्त सुनीता को कितना चाहता है? सुनीता भी अग्नि से कम प्रेम नहीं करती।

चन्द्रगुप्त अब अपने शोक का संवरण नहीं कर सके। यह बात समाप्त करते ही वे रो पड़े।

इतनी देर के बाद अन्नपूर्णा के आचरण में भी कोमलता और ममता का थोड़ा-बहुत प्रभाव मिलने लगा। उतावली के साथ स्वामी के पास वह पहुँची और उनका हाथ पकड़कर धीरे-धीरे खींचती हुई बोली—चलो, चलो, बाहर चलो। दिन भर इसी कमरे में बन्द रहने के कारण तुम्हारा मन और खराब होता जा रहा है। निरर्थक मन में अशुभ आशंका को स्थान देकर तुम दुःखी हो रहे हो। जब तक स्पष्ट रूप से यह न मालूम हो जाय कि कोई अमंगल की ही बात हो गई है तब तक क्यों इस प्रकार की चिन्ता को हृदय पर अधिकार करने देते हो? अभी तो हमें यही समझना चाहिए कि चित्रगुप्त सकुशल है।

अन्नपूर्णा के साथ कमरे से निकलकर जाते-जाते चन्द्रगुप्त ने सुनील से कहा—तुम हाथ-मुँह धोकर ज़रा विश्राम करो। बहुत दूर से आ रहे हो।

कमरे के द्वार के पास ही एक नौकर खड़ा था। उसकी ओर संकेत करके चन्द्रगुप्त ने कहा—फूलचन्द, साहब को रहने के लिए कमरा और गुसलखाना दिखला दो। हाथ-मुँह धो लेने के बाद इन्हें चाय और जलपान की सामग्री दे देना।

अतिथि की आवभगत की व्यवस्था करना गृहिणी का ही कर्त्तव्य था। परन्तु उन्होंने इस सम्बन्ध में मुँह से एक बात तक नहीं निकाली, यह देखकर सुनील का मन क्षुब्ध और अप्रसन्न हो उठा। परन्तु उसने निश्चय किया कि मित्र के लिए हर प्रकार की असुविधा और उपेक्षा स्वीकार करके मैं यहाँ रहूँगा।

४

सुनील ने हाथ-मुँह धोया, कपड़े बदले और मकान के अहाते में जो बगीचा था, उसमें वह टहलने लगा। मित्र के अदृश्य होने का कारण क्या हो सकता है, इसी विषय पर वह गम्भीर-भाव से विचार कर रहा था। वह क्यों गया, कहाँ गया, कैसे गया और किस उपाय का अवलम्बन करके उसकी खोज की जा सकती है, इन्हीं सब विषयों पर विचार करते करते वह मकान के सदर फाटक पर पहुँच गया। वहाँ पहुँचकर सुनील ने देखा तो जो घुड़सवार स्टेशन की ओर दौड़ता हुआ जा रहा था, वही अब लौट रहा था। घोड़े का वेग ठीक पहले का सा ही था। सुनील उत्सुक भाव से अपनी दृष्टि सवार के ऊपर जमाये हुए द्वार से जरा सा बगल हटकर खड़ा हुआ।

सुनील के मन में यह बात आई थी कि घुड़सवार मेरी ओर दृष्टि पात तक न करके बराबर घर के भीतर चला जायगा क्योंकि उसके घोड़े का वेग जरा भी कम नहीं हो रहा था। इसीलिए सुनील रास्ता छोड़कर फाटक पर एक बगल खड़ा हो गया था। उसकी इच्छा थी कि सवार जब समीप आ जाय तो उसको बुलाकर खड़ा करूँ और हाल चाल पूछूँ। परन्तु घुड़सवार ने दूर से ही सुनील को देखकर घोड़े का वेग क्रमशः कम करना आरम्भ कर दिया। उसके समीप आकर उसने घोड़ा रोक दिया और उस पर से कूदकर उतरने के बाद बायें हाथ से बागडोर पकड़ ली और दाहिना हाथ उठाकर झुककर सलाम किया।

सुनील ने उससे पूछा—कोई समाचार मिला है क्या? उस आदमी ने कहा—नहीं हुजूर, अभी तक तो कोई समाचार नहीं मिला। स्टेशन

वे नहीं गये । गए न होते तो किसी की दृष्टि उन पर अवश्य ही पड़ी होती । इस ओर के सभी लोग तो उन्हें पहचानते हैं, सभी को तो वे प्रिय हैं । जो सुनता है वही आश्चर्य में पड़ जाता है और दुःख प्रकट करने लगता है ।

सुनील ने कहा—चित्रगुप्त बाबू मेरे मित्र हैं । हम दोनों आदमी बम्बई में साथ-साथ रहा करते थे । उनसे मिलने के लिए बम्बई से मैं इतनी दूर आया हूँ । यहाँ आने पर देखा कि जिनके पास मैं आया हूँ वे हैं ही नहीं ।

घुड़सवार ने कहा— हां, हां, परसों वे आपकी चर्चा कर रहे थे । उन्होंने मुझसे कहा—ताराचन्द बम्बई से मेरे एक मित्र आवेंगे, उन्हें ले आने के लिए स्टेशन चलना होगा, तुम अपनी मोटर ठीक कर रखना ।

ताराचन्द यह बात एक विस्तृत भूमिका के साथ बतलाने लगा और यदि सुनील उसे रोक न देता तो उसकी भूमिका शायद समाप्त ही न हो पाती । सुनील ने पूछा—अच्छा ताराचन्द चित्रगुप्त बाबू जो इस तरह एकाएक अदृश्य हो गये हैं तुम्हारे विचार मे इसका क्या कारण हो सकता है ?

ताराचन्द ने कहा—मुझे तो कोई भी ऐसा कारण नहीं मालूम पड़ता हुजूर ? इस घटना ने मुझे बड़े आश्चर्य में डाल दिया है । बुद्धि बिलकुल काम ही नहीं दे रही है ।

सुनील ने पूछा—क्या तुम्हारी धारणा है कि वह स्वेच्छा से कहीं छिपा रह कर वृद्ध पिता तथा माता को चिन्तित करके उन्हें क्लेश दे सकता है ?

ताराचन्द ने कहा—नहीं हुजूर, प्राण रहते तक तो वे कभी इस तरह का काम कर न सकेंगे । उनके प्राण ही नहीं हैं, यह मेरी दृढ़ धारणा है । परन्तु यह मैं कैसे कहूँ कि किसी ने उनकी हत्या करके लाश गायब कर दी है । हम लोगों ने तो सारा मकान, बगीचा तथा

जंगल आदि रत्ती-रत्ती खोज डाला है, कहीं किसी प्रकार का सुराग़ नहीं लग सका। केवल घर के भीतर की झील में नहीं खोज की गई, यदि आपकी आज्ञा हो तो उसमें भी जाल डालकर देख लिया जाय।

सुनील ने कहा—झील में सबसे पहले खोज करनी चाहिए थी। परन्तु उसमें जाल डालने की आज्ञा देना मेरे लिए उचित न होगा। किशोर उनका भाई है। उनका कर्त्तव्य है कि वे बड़े भाई को खोजने के लिए हर प्रकार का प्रयत्न करें। परन्तु ऐसे समय में तो वे घर में हैं ही नहीं!

"इसका कारण क्या है, यह आप जानते नहीं हुजूर। घर में उनसे किसी की जरा भी नहीं बनती! नौकरों के साथ तो वे सदा ही खिच-खिच करते रहते हैं। भाई को देखकर वे सदा जलते ही रहते हैं। उस दिन पिता से भी खूब लड़ गये थे। झगड़ा तो उनका कभी-कभी माँसे भी हो जाता है, किन्तु औरों की अपेक्षा उनसे कम होता है। जब से मिस साहेब सुनीता बीबी ने यहाँ आना आरम्भ किया है, तभी से झंझट की नींव पड़ी है। चित्रगुप्त साहब पहले की तरह अब केवल लिखने-पढ़ने में ही नहीं व्यस्त रहा करते। आजकल वे कुछ चंचल से हो उठे हैं। इस स्त्री ने आते ही मानों उन्हें सोते से जगा दिया है। किशोर साहब तो सदा से ही चंचल प्रकृति के थे इधर उनकी चंचलता और भी बढ़ गई है। बड़े भाई से प्रतिद्वन्द्विता करके सुनीता बीबी के हृदय पर अधिकार करने के प्रयत्न में वे हैं। हमारे साहब की इच्छा है कि सुनीता बीबी के साथ अग्नि बाबू का विवाह हो किन्तु मेम साहब चाहती हैं किशोर बाबू के साथ उनका विवाह करना। इस कारण से भी मन में शान्ति नहीं है। किशोर बाबू हैं मेम साहब की अपने पेट की सन्तान, इसलिए उनकी ओर स्वभावतः उनका आकर्षण अधिक है।"

"किन्तु सुनीता बीबी का आकर्षण किसकी ओर है? वे किसे अधिक चाहती हैं? मैंने तो सुना था कि उनके साथ चित्रगुप्त का ही विवाह होना निश्चित हुआ है परन्तु अब क्या किशोर बड़े भाई के मुंह

का ग्रास निकाल लेने की चिन्ता में हैं ?"

"आप चित्रगुप्त साहब के मित्र हैं, इससे आपसे बतलाने में तो कोई हानि नहीं है हुज़ूर ! किशोर साहब बड़े भाई को यदि हर प्रकार से बेदखल कर सकें तभी उन्हें खुशी होगी।"

"किशोर गया कहाँ है इस समय ?"

"वे बड़े भाई को खोजते फिर रहे हैं।"

"बड़े भाई को खोजते फिर रहे हैं या ज़िसके साथ बड़े भाई का विवाह होने वाला हैं, उसके साथ स्वयं विवाह करने का उद्योग करने के लिए गये हैं ?"

"आपके नेत्रों की दृष्टि यदि इतनी दूर तक जा सकती है तब तो मुझमें यह शक्ति है नहीं कि मैं आप से कोई बात छिपा सकूं ? किशोर साहब सुनीता बीबी के पास ही गये हैं। स्टेशन पर टिकट लेकर मैं उन्हें गाड़ी पर बैठाल आया हूँ। परन्तु वे केवल सुनीता बीबी के ही पास नहीं गये हैं, किन्तु आज वहाँ एक बहुत बड़ा रेस भी है। छोटे साहब को रेस का बड़ा शौक है। रेस में वे बड़ा रुपया फूंक चुके है। इसीलिए साहब ने उनके मासिक में बहुत कमी कर दी है। इसी विषय में आजकल पिता-पुत्र में काफी अन-बन भी हो गई है।"

"तब वे रुपये कहाँ से पाते हैं ? शायद माँ से पा जाते होंगे ?"

"जी हाँ, माँ से उन्हें रुपये मिलते हैं। परन्तु उतने रुपयों से उनका काम नहीं चल पाता। बड़े भाई से भी वे कुछ रुपये पा जाया करते हैं। चित्रगुप्त साहब बहुत अच्छे आदमी है इससे बड़े साहब पुस्तकें खरीदने के लिए उन्हें बहुत से रुपये दिया करते हैं। किन्तु किशोर साहब वे रुपये माँगकर रेस खेला करते हैं। चित्रगुप्त साहब भाई को बहुत प्यार किया करते हैं, इसलिए कुछ माँगने पर उनसे इनकार नहीं किया जाता। बड़े साहब के पास रेस का एक निजी घोड़ा है। उसके ऊपर किशोर साहब की दृष्टि लगी हुई है। उस दिन उन्होंने मुझसे कहा—ताराचन्द मेरे ऊपर कुछ ऋण हो गया है। यदि तुम दो दिन के लिए राकेट

घोड़ा चुपके से मुझे दे सकते तो मैं रेस जीतकर अपना ऋण चुका सकता था।"

"तब क्या तुमने घोड़ा दिया उसे ?"

"नहीं हुजूर, मैं कैसे दे सकता हूँ ? बात यदि किसी प्रकार बड़े साहब के कान में पहुँच जाय तो मेरी नौकरी जा सकती है। गरीब आदमी हूँ, हुजूर नन्हें-नन्हें बच्चों का पेट कहाँ से भरूँगा ऐसा विकराल समय लगा है..."

बीच में ही ताराचन्द को रोककर सुनील ने कहा—चित्रगुप्त यदि मार डाला गया तो साहब की सारी सम्पत्ति किशोर के ही हाथ लगेगी न ?

मस्तक हिलाकर ताराचन्द ने कहा—हां हुजूर, उनके सिवा और कौन पाने वाला है ? वे ही तो इस समय.........

सांझ हो चली थी। ताराचन्द की बातों के प्रवाह का अन्त न होते देखकर सुनील ने उसे रोक दिया और कहा—तो अब तुम चलकर तालाब में जाल डालने का प्रबन्ध करो।

"अच्छी बात है हुजूर।"—यह कहकर ताराचन्द घोड़े की लगाम पकड़े हुए फाटक के भीतर प्रवेश करके टेढ़े-मेढ़े रास्ते में अदृश्य हो गया। सुनील ज़रा देर तक तो वहीं टहलता रहा, बाद को कुछ सोचते-सोचते वह भीतर की ओर चला।

मकान के अहाते में जो बगीचा था, उसमें चारों ओर टहलते-टहलते सुनील इसी बात का निर्णय करने का प्रयत्न कर रहा था कि अकस्मात् चित्रगुप्त के अदृश्य हो जाने का रहस्य क्या हो सकता है और उसका अन्वेषण करने के निमित्त किस सूत्र का अवलम्बन करके किस दिशा में उद्योग करना चाहिए।

क्रमशः सन्ध्या का अन्धकार प्रगाढ़ हो गया। बगीचे का एक भी ऐसा वृक्ष नहीं रह गया जिस पर आकर चिड़ियों ने अड्डा न जमा लिया हो। समस्त दिन आहार की खोज में आकाश-मण्डल में चक्कर लगाने

के बाद उन सबने अपने अपने घोंसलों में आश्रम ग्रहण किया और अपने कलरव से सन्ध्या काल के समीरण को मुखरित कर दिया। उधर महल के समीप ही बने हुए देवी जी के मन्दिर में सन्ध्याकाल की आरती आरम्भ होने पर कांस का घण्टा बज उठा। वह शब्द सुनकर सुनील सचेत सा हो उठा। मन ही मन भगवान को प्रणाम करके लौट कर वह तालाब की ओर चला। दूर से ही उसने देख लिया कि थोड़े से आदमी तालाब के किनारे पर छाया चित्र के समान टहल रहे हैं। आगे बढ़कर सुनील जब मकान के पास पहुंचा तब उसने देखा कि बाहर के द्वार के सामने सीढ़ी के ऊपर अन्नपूर्णा खड़ी हैं। उसे देखते ही सुनील जरा सा चिन्तित और व्यस्त हो उठा। उसके मन में यह बात आई कि शायद माता की आँख के सामने पुत्र का निर्जीव शरीर खोजना बड़ी ही निष्ठुरता तथा अविवेक का कार्य होगा। इसलिए उतावली के साथ वह अन्नपूर्णा की ओर बढ़ गया और कहने लगा—आप इस समय जरा देर के लिए घर के भीतर चली जाइए। सुनील के इस अनुरोध का कारण क्या हो सकता है, यह बात हृदयगंम करने के विचार से अन्नपूर्णा ने जैसे ही चारों ओर दृष्टि दौड़ाना आरम्भ किया, वैसे ही वह तालाब के घाट पर छाया चित्रों को चलते फिरते देख गई। उनका उद्देश्य समझकर वह बोली—चित्रगुप्त मछली के समान तैर सकता था। उसे इस तालाब में खोजना व्यर्थ है। तो भी सन्देह निवृत्त करने के विचार से यदि देखना चाहो तो देख सकते हो।

सुनील ने देखा कि चित्रगुप्त के सम्बन्ध में जो कोई किसी प्रकार की भी बात करता है, वह क्रियापद में भूतकाल का ही प्रयोग करता है। सब लोगों ने ही मन में निश्चय कर लिया है कि वह अब जीवित नहीं है। उसे ऐसा भी जान पड़ा कि स्थिर रूप से पुत्र की मृत्यु का अनुमान कर लेने पर भी अन्नपूर्णा कुछ वैसी अधीर नहीं हुई हैं। माता की अपेक्षा पिता ही अधिक शोकाकुल हैं। इसलिए उसने अन्नपूर्णा से पूछा—बाबू साहब कहाँ हैं? इस समय क्या कर रहे हैं वे?

अन्नपूर्णा ने कहा—मैं ही उन्हें बड़ी कठिनाई से सुला आई हूँ। थोड़ी-सी नींद आ गई है उन्हें। कल से तो आहार-निन्द्रा त्यागे ही हुए हैं वे !

और कुछ न कहकर सुनील वहीं टहलने लगा। अन्नपूर्णा भी मुँह से कोई बात न निकालकर कुछ क्षण तक तो चुपचाप खड़ी रही, बाद को वह भीतर चली गई।

रात्रि के प्रगाढ़ अन्धकार में घने वृक्षों की आड़ में बना हुआ वह मकान खूब चटकीली रोशनाई के तालाब में डूबा हुआ-सा जान पड़ रहा था। भूत के समान आकर ताराचन्द ने नीरस-भाव से केवल मस्तक हिला दिया। इस प्रकार उसने सूचित किया कि कोई पता नहीं चल सका। मकान के भीतर जाकर सुनील ने अन्नपूर्णा को खोज लिया और उसने उसे इस आशय की सूचना दे दी।

एक लम्बी साँस लेकर अन्नपूर्णा ने कहा—यह तो मैं पहले ही कह चुकी थी। तो भी मेरा हृदय धक-धक कर रहा था। भगवान् ने रक्षा की है।

५

रात्रि में भोजन-आदि से निवृत्त होने के बाद घर के सभी आदमी विश्राम के निमित्त अपने-अपने कमरे में चले गये। क्रमशः सारे घर में निस्तब्धता छा गई। दुश्चिन्ता के कारण सुनील को निद्रा आ नहीं रही थी। बिस्तरे पर पड़े-पड़े ज़रा देर तक करबटें बदलने के बाद वह उठ पड़ा। टेबिल के ऊपर समादान रक्खा हुआ था। उसमें रक्खी हुई बत्ती जलाकर सुनील ने समादान उठा लिया और वह कमरे से निकल पड़ा। उसने यह निश्चय किया कि चित्रगुप्त के सोने और पढ़ने का कमरा जरा खूब ध्यान से देख लेना चाहिए!

सुनील पहले-पहल चित्रगुप्त के सोने के कमरे में गया। वहाँ भी एक-एक चीज को उसने खूब ध्यान से देखा। परन्तु उसे कोई भी ऐसी वस्तु न मिल सकी, जिसके द्वारा वह चित्रगुप्त के इस प्रकार एकाएक अदृश्य हो जाने के सम्बन्ध में किसी प्रकार का अनुमान कर पाता। अब वह उसके पढ़ने के कमरे की ओर चला। वह कमरा एक अद्भुत प्रकार के स्थान पर बना था। मकान के एक कोने में था वह कमरा। बहुत टेढ़ा-मेढ़ा, गली-कूँचा पार करके जाना पड़ता था उसमें। इस ओर का भाग सारे मकान से मानो एक प्रकार से पृथक् था। एक पतली-सी गली के पास एक पंक्ति में बारह कमरे बने थे। एकांत में निर्विघ्न-भाव से पढ़ने-लिखने में सुविधा होगी, यह सोचकर ही चित्रगुप्त ने इस ओर का एक कमरा अपने पढ़ने के लिए ठीक किया था। सुनील ने सोचा कि शायद चित्रगुप्त के कागज़-पत्र में कोई ऐसा पत्र या नोट-आदि कहीं मिल जाय जिससे कि उसके एकाएक अन्तर्धान हो जाने का कोई कारण मालूम किया जा सके। इसी विचार से वह

उसका टेबिल, द्वार तथा आलमारी आदि सब उलट-पुलट कर देखने लगा; परन्तु मतलब की कोई भी चीज न हाथ लग सकी। कमरे में लगी हुई घड़ी में उस समय बारह बज चुके थे। इससे हताश होकर सुनील फिर अपने कमरे में लौट आया।

बिस्तरे पर पड़े-पड़े वह अविराम गति से अपनी कल्पना के घोड़े दौड़ाता रहा। सम्भव-असम्भव कितनी बातें उसके मन में उदित हुईं। सुनील उस समय विचार कर रहा था घर के लोगों की अवस्था के सम्बन्ध में। उसके मन में आया, चित्रगुप्त के पिता शोक में अत्यन्त ही अधीर हो उठे हैं; परन्तु माता के मन पर भी पुत्र-शोक का कुछ-कुछ विशेष प्रभाव पड़ा है, यह तो मालूम नहीं पड़ता। सौत का लड़का है तो क्या हुआ ? इतने दिनों से साथ में रहती आ रही हैं कुछ न कुछ ममता तो होनी चाहिए थी। कारण क्या है जो चित्रगुप्त का अदृश्य हो जाना उन्हें ज़रा भी नहीं खल रहा है ? किशोर भी पिता को इस धोखे में डाल कर कि मैं भाई की खोज करने जा रहा हूँ, गया है रेस खेलने और भाई की भावी पत्नी का मन अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयत्न करने के लिए। तो क्या इन लोगों के आचरण से चित्रगुप्त के अदृश्य होने का कोई सम्पर्क है ? परन्तु उसने घर छोड़ा था दोपहर के समय। कहीं जाते हुए उसने उसे देखा भी नहीं। साथ में कुछ वस्त्र-आदि भी नहीं ले गया है। इसका कारण क्या हो सकता है ? पिता से बातचीत करते-करते उसे याद आई अपने पढ़ने वाले कमरे के सबसे अन्त के कोने में बनी हुई गुम्बज पर लिखे हुए फारसी अक्षरों के पढ़ने की। इसी उद्देश्य से वह कमरे से निकला है, बाद को लौटकर वह नहीं आया। सम्भव है कि खोज करते-करते अन्त में···किन्तु, अन्त में क्या ?

रात्रि में ही, पत्थर पर खुदा हुआ फ़ारसी का वह लेख देखने का इतना प्रबल आग्रह सुनील के हृदय में उत्पन्न हुआ कि वह किसी प्रकार भी स्थिर न रह सका। उतावली के साथ वह बिस्तरे पर से उठ पड़ा।

दियासलाई खींच कर वह बत्ती जलाने का उद्योग कर रहा था। डिब्बी में एक ही तीली थी। वह बत्ती जलने से पहले ही बुझ गई। इससे सुनील चिन्ता में पड़ गया। चारों ओर दृष्टि दौड़ाने पर उसने देखा कि कृष्ण पक्ष के चन्द्रमा उदित हो आये हैं और क्षीण होने पर भी उन का प्रकाश खुली हुई खिड़की से कमरे में आ रहा है। इससे सुनील ने निश्चय किया कि चन्द्रमा के इस प्रकाश में मार्ग निर्धारित करने में मुझे कठिनाई न होगी। बाद को चित्रगुप्त के कमरे में पहुँच जाने पर सम्भवतः मुझे दियासलाई मिल जायेगी। यह सोचकर प्रकाश के बिना ही वह कमरे से निकल पड़ा। खटखटाहट से अन्नपूर्णा और चन्द्रगुप्त के विश्राम में व्याघात न पड़े, इस आशका से उसने पैरों में जूते भी नहीं पहने।

सुनील ने सोचा था कि चित्रगुप्त का कमरा खोजने में मुझे विशेष कठिनाई न पड़ेगी। परन्तु अन्त में उसकी यह धारणा गलत साबित हुई। जिस गली से होकर उस कमरे में जाना था, उस गली तक चन्द्रमा की किरणों की पहुँच ही नहीं हो सकी। धीरे-धीरे पैर रगड़-रगड़ कर टटोल-टटोलकर वह आगे की ओर बढ़ता गया। इस गोरख-धन्धे में वह ठीक-ठीक अनुमान नहीं कर पाता था कि चित्रगुप्त का कमरा कौन-सा है। टटोलते-टटोलते एक कमरे के द्वार पर उसका हाथ पड़ा। उसने सोचा कि शायद यही चित्रगुप्त का कमरा होगा। इससे वह दरवाजा खोलने लगा। हाथ से जरा-सा ठेलते ही दोनों कपाट खुल गये। कमरे में प्रवेश करने के बाद दोनों हाथ फैलाकर वह फिर टटोलने लगा। वह सोच रहा था कि पुस्तकों की आलमारी यदि मिल जाती तो उसके आधार पर मैं रास्ता ठीक कर लेता। परन्तु कहीं भी किसी रेक या आलमारी से उसका हाथ न टकरा सका। दीवार पर कुछ दूर तक हाथ फेरकर उसने देखा तो सारी दीवार खाली थी। तब उसके मन में यह बात आई कि अँधेरे में भूलकर मैं किसी और कमरे में चला आया हूँ। इसलिए यहाँ से अब भागना ही उचित है,

दिन के उजाले में ही शिलालेख की परीक्षा करना ठीक होगा। इससे वह लौटने का उपक्रम करने लगा। इतने में समीप के ही किसी कमरे का द्वार खुलने की आवाज उसके कान में आई। चकित होकर दरवाजे से मस्तक निकाल कर वह झाँकने लगा। सुनील जिस कमरे में था, उसके पास वाले कमरे के बाद के कमरे से निकलकर एक रमणी बाहर आई। सुनील को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि वह रमणी और कोई नहीं अन्नपूर्णा है ?

सुनील के मन में यह बात आई कि जिस कमरे से अन्नपूर्णा निकली है वह चित्रगुप्त के पढ़ने का कमरा है। परन्तु इतनी रात्रि में अन्नपूर्णा इस कमरे में क्यों आई थीं ? अनिर्दिष्ट आशंका और सन्देह से सुनील का हृदय पूर्ण हो उठा। अन्नपूर्णा जब वहाँ से चली गई तब वह गुप्त स्थान से निकल आया और बहुत दबे पाँव से धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा। चारों ओर खूब ध्यान से ताकते-ताकते सुनील ने उसी कमरे में प्रवेश किया जिसमें से अभी अन्नपूर्णा निकली थीं। उसमें प्रवेश करते ही उसे निश्चय हो गया कि हाँ, यह कमरा सुनील का लाईब्रेरी वाला ही कमरा है।

कमरे में टटोल-टटोलकर सुनील कुछ देर तक दियासलाई खोजता रहा। परन्तु कहीं भी कोई दियासलाई उसके हाथ नहीं लगी। अतएव उसे प्रातःकाल तक प्रतीक्षा करना ही उचित जान पड़ा, इससे कमरे से वह बाहर निकल आया। चुपके से दरवाजा बन्द कर देने के विचार से जैसे ही उसने कपाट में लगे हुए लोहे के चुल्ले में हाथ लगाया वैसे ही चुल्ला भीगा हुआ-सा मालूम पड़ा। विस्मत होकर सुनील ने सोचा कि भय और उद्वेग के कारण क्या मेरे हाथ में पसीना हो आया ? एक छेद के रास्ते से चन्द्रमा का एक टुकड़ा भर प्रकाश उस गली में आकर पड़ रहा था। उसी प्रकाश में हाथ फैलाकर सुनील ने देखा। उसके हाथ में रक्त लगा हुआ था। अब सुनील के विस्मय की सीमा न रही। उसने मन में कहा—कपाट के चुल्ले से मेरे हाथ में रक्त लग गया है और यह कपाट अभी बन्द करके गई हैं अन्नपूर्णा।

सुनील ने देखा यह जो मेरे हाथ में रक्त लगा है, वह चित्रगुप्त के पढ़ने वाले कमरे के दरवाजे के चुल्ले से लगा है और अभी-अभी इस कमरे से चित्रगुप्त की विमाता अन्नपूर्णा निकलकर गई है इससे उसका हृदय अत्यधिक भय, चिन्ता तथा सन्देह से पूर्ण हो उठा। उसके मन में आया कि इस कमरे में न जाने कैसी घटना हो गई है। यह रक्त क्या मेरे मित्र चित्रगुप्त का ही है ? यह रक्तपात किया किसने और क्यों किया ?

सुनील जहाँ पर खड़ा था, वहीं बड़ी देर तक काठ की तरह वह खड़ा रहा। बाद को जरा-सा सचेत होकर वह फिर भी चित्रगुप्त के कमरे के द्वार के पास पहुँचा और उसी चुल्ले में उसने हाथ लगाया। चुल्ले को छूते ही सुनील का शरीर रोमांचित हो उठा। हृदय धक् से हो उठा। उसका समस्त हृदय आतंक से पूर्ण हो उठा। किन्तु सुनील ने देखा कि चुल्ला पहले की तरह भीगा नहीं है। उसमें जो रक्त लगा है। वह सूख गया है।

एक बार सुनील के मन में आया कि इस समय चलकर बिस्तरे पर लेट जाना ही अच्छा है, कल प्रातःकाल साथ में चन्द्रगुप्त बाबू के साथ लेकर ही खोज करना ठीक होगा। किन्तु बाद को उसके मन में आया—नहीं, खोज इसी समय करनी चाहिए। इस समय खोज करने पर संभव है कि चित्रगुप्त घायल होकर मृतप्राय अवस्था में पड़ा हुआ मिल जाय। तब तो उसकी रक्षा भी की जा सकेगी, साथ ही यह भयंकर रहस्य खुल जायगा।

अन्धकारमय कमरे में टटोलते-टटोलते सुनील के हाथ में एक दिया-सलाई लग गई। डिब्बी में से एक काड़ी निकालकर जैसे ही वह जलाने

का उद्योग करने लगा उसका शरीर थर-थर काँपने लगा, दाँत भी आपस में टकराकर किट किट करने लगे। उसे भय हो रहा था कि उजाला हो जाने पर पता नहीं कैसा वीभत्स दृश्य देखने को मिलेगा।

दियासलाई की डिब्बी में लगे हुए रोगन से काड़ी को कई बार रगड़ने के बाद उजाला हो उठा। काड़ी के फुर से जलते ही सुनील की अन्तरात्मा भी काँप उठी। इधर उजाला मिल जाने पर उसकी आँख भी विस्फारित हो उठी। सुनील ने उतावली के साथ एक बार चारों ओर दृष्टि फेरकर देखा। परन्तु कहीं भी खून-खच्चर या रक्तपात का चिन्ह तक उसे दिखाई न पड़ सका। तब जरा कुछ धैर्य में आकर वह चिराग जलाने का उद्योग करने लगा। परन्तु चिराग मिलने से पहले ही दियासलाई की काँड़ी बुझ गई।

उजाले के बाद जब अँधेरा हुआ तब वह अत्यन्त ही प्रगाढ़ हो उठा और कहीं कुछ सूझ ही न पड़ता। अब सुनील को ऐसा मालूम पड़ने लगा कि मानों चारों ओर खुस-खस शब्द हो रहा है और शरीरहीन भूत चारों ओर से उसे घेरे हुए अन्धकार में मिलकर घूम-फिर रहे हैं। डर के मारे सुनील के शरीर का रोयाँ-रोयाँ खड़ा हो गया।

सुनील फिर दियासलाई जलाने का प्रयत्न करने लगा। कई बार के प्रयत्न के बाद फिर एक काँड़ी जली। अब उसे चित्रगुप्त के टेबिल के पास कमरे के कोने में तिपाई पर रक्खा हुआ एक लैम्प दिखाई पड़ा। सुनील ने जलती हुई एक काँड़ी को लैम्प की बत्ती में लगाने का प्रयत्न किया किन्तु बत्ती में वह लग भी न पाई कि आग की लौ उसकी उँगली में लगने लगी; इससे काँड़ी को उसने भूमि पर फेंक दिया।

फिर अँधेरा हो गया। इस बार दियासलाई की काड़ी जलाने पर लैम्प भी जल गया। अभी तक कमरे की जो चीजें एक अद्‌भुत आकार धारण करके सुनील के हृदय में आतंक उत्पन्न कर रही थीं, अब उजाला होने पर वे ही चीजें स्वाभाविक रूप में उसके सामने आईं। सुनील ने देखा कि चित्रगुप्त के टेबिल पर उसके हाथ के लिखे हुए भारत

के इतिहास के पन्ने इधर-उधर बिखरे पड़े हैं और उन पन्नों के आस-पास ही विभिन्न व्यक्तियों के लिखे हुए इतिहास तथा रिपोर्टें आदि पड़ी हैं।

सुनील कमरे भर में दृष्टि फेर गया। उसे आशा थी कि कमरे में कहीं न कहीं रक्तपात का चिह्न अवश्य दिखाई पड़ेगा। परन्तु कहीं ज़रा भी रक्त लगा हुआ उसे दिखाई न पड़ा। अब बहुत-कुछ स्वाभाविक अवस्था में आकर उसने अपने हाथ पर दृष्टि डालकर देखा। जितना वह समझ रहा था, उतना रक्त लगा नहीं था। एक स्थान पर ज़रा-सा रक्त का हलका-सा दाग पड़ गया था। उसके मन में आया कि धोती के छोर से यह दाग पोंछ डालूँ। परन्तु तुरन्त ही एकाएक वह फिर काँप उठा। यह रक्त मेरे मित्र का ही है, यह सन्देह वह किसी प्रकार भी अपने हृदय से नहीं निकाल पाता था।

सुनील के मन में आया कि पहले-पहल जब मुलाकात हुई है तभी से अन्नपूर्णा का ढंग ठीक नहीं मालूम पड़ रहा है। चित्रगुप्त के अन्तर्धान हो जाने के कारण उनमें कुछ अधीरता आई है, इस बात का भी कोई लक्षण नहीं प्रकट होता। चित्रगुप्त उनकी सौत का लड़का है, पिता को वह अधिक प्रिय है, उनके पुत्र किशोर से सब विषयों में उसकी प्रतिद्वन्द्विता है, पिता ने अप्रसन्न होकर किशोर का मासिक घटाकर चित्रगुप्त का मासिक बढ़ा दिया है, इधर धनवान् पिता की एकमात्र पुत्री सुनीता के साथ चित्रगुप्त का विवाह भी निश्चित हुआ है, ये सब ऐसी बातें हैं जिनके कारण चित्रगुप्त के प्रति अन्नपूर्णा के मन में विद्वेष का भाव उत्पन्न हुए बिना नहीं रह सकता। उनके मन में यह बात अवश्य आई होगी कि चित्रगुप्त को यदि किसी प्रकार हटाया जा सके, तो किशोर का मार्ग निष्कण्टक हो जाय और वह सरलतापूर्वक अपने पिता के अतिरिक्त सुनील के पिता की भी समस्त सम्पत्ति का एकमात्र उत्तराधिकारी हो सकेगा।

यह सब तर्क-वितर्क करने के बाद सुनील इस निर्णय पर पहुँचा कि

गुप्त रीति से चित्रगुप्त की हत्या कर डालने की प्रवृत्ति अन्नपूर्णा में उत्पन्न हो आने के लिए ये सब कारण पर्याप्त है। इनकी अपेक्षा कहीं अधिक साधारण कारणों से सौत के पुत्र का प्राण-वध करने वाली कितनी विमातायें सुनने में आई हैं। परन्तु चित्रगुप्त को तो अपनी इन विदुषी और सुदक्ष नई माता की प्रशंसा करने में तृप्ति ही नहीं होती थी! नई माँ की चर्चा छिड़ती नहीं कि चित्रगुप्त अपनी वाणी से श्रद्धा, भक्ति और स्नेह की धारा प्रवाहित करना आरम्भ कर देता। अन्नपूर्णा ने इस विषय में अच्छी ख्याति भी प्राप्त की थी कि सौत के पुत्र के प्रति अपने पुत्र की अपेक्षा वे किसी प्रकार कम स्नेह-ममता का भाव नहीं प्रदर्शित करतीं। ऐसी दशा में इस प्रकार की सुशिक्षिता सुन्दरी तथा उच्च कुल की महिला के लिए ऐसे जघन्य कर्म में हाथ लगाना सम्भव है, इस प्रकार के सन्देह को मन में स्थान देना ही बहुत अनुचित है।

इस रहस्यमय गोरख धन्धे में प्रवेश करके सुनील भटकते-भटकते व्याकुल हो रहा था; बाहर निकलने का रास्ता उसे नहीं सूझ पड़ता था। हताश होकर वह एक कुर्सी पर बैठ गया और समस्याओं के इस जाल में से मीमांसा के लिए कोई उपयुक्त सूत्र खोज निकालने के लिए गम्भीर भाव से चिन्ता करने लगा।

कुछ क्षण सोच विचार करने के बाद सुनील चित्रगुप्त के काग़ज़-पत्र तथा पुस्तकें आदि उलटकर देखने लगा। उसने सोचना आश्चर्य नहीं कि कोई ऐसा नोट या पत्र इनमें मिल जाय, जिससे चित्रगुप्त के घर से निकल भागने या उसकी गुप्त हत्या का कोई संकेत मिल सके। परन्तु खूब ध्यान से खोजने पर भी उसे कोई ऐसी वस्तु नहीं मिल सकी।

हाथ में लैम्प लिये हुए सुनील कमरे से बाहर निकला। दरवाजे के चुल्ले को वह ध्यान से देखने लगा। लोहे का चुल्ला ओस से भीग गया था। उस पर मटमैले सेंदुर का-सा ज़रा सा रंग लगा था अवश्य; किन्तु ठीक रक्त नहीं मालूम पड़ता था। इससे सुनील के मन में आया कि

मित्र की खोज करने का अत्यन्त प्रबल आग्रह होने के कारण मैंने हृदय में शायद एक मिथ्या भय तथा सन्देह को स्थान देकर इतना आकाश-पाताल बाँधना आरम्भ कर दिया था।

एक प्रकार से बेवकूफ़ बनकर सुनील ने दीपक बुझाया; कमरे का द्वार बन्द कर दिया और वह अपने कमरे में चला गया।

सारी रात सुनील को जरा भी निद्रा नहीं आ सकी। सवेरा होते ही उसे चन्द्रगुप्त तथा घर के नौकरों के उठने की आहट मिली। उतावली के साथ आँख-मुँह धोकर वह स्वयं भी बाहर निकल पड़ा।

नीचे उतरते-उतरते सुनील ने सुना कि चन्द्रगुप्त नौकरों को नये-नये स्थानों में जाकर नये-नये ढंग से चित्रगुप्त की खोज में लगने का आदेश कर रहे हैं। सुनील का मन संकल्प-विकल्प और दुश्चिन्ता से आन्दोलित होने लगा। वह इसी उधेड़-बुन में पड़ा था कि गत रात्रि की घटना की चर्चा चन्द्रगुप्त से करना उचित है या नहीं ? अन्त में वह इसी निर्णय पर पहुँचा कि स्वामी के समक्ष स्त्री के चरित्र के सम्बन्ध में किसी प्रकार का सन्देह प्रकट करना मेरे लिए बुद्धिमानी का कार्य न होगा।

सुनील के समीप आते ही चन्द्रगुप्त ने पूछा—तुम इतने सवेरे ही उठ गये हो बेटा ? रात्रि में तुम्हारी निद्रा में तो कोई व्याघात नहीं हुआ ?

व्याघात भला नहीं हुआ ! परन्तु इस बात को स्पष्टरूप से न कहकर सुनील ने जरा-सा घुमाकर कहा—एक तो नई जगह है, दूसरे मन में इतनी घोर चिन्ता थी।

एक आह भरकर चन्द्रगुप्त ने कहा—आज फिर सुनीता आ रही है ! उससे मैं क्या कहूँगा, इस दुश्चिन्ता से मैं भी सारी रात सो नहीं सका हूँ। ......अच्छा सुनील, तुम तो बहुत देर तक सोच-विचार कर चुके हो, क्या आता है तुम्हारे मन में ? क्या चित्रगुप्त जीवित हैं ?

सुनील ने कहा—मुझे तो इस बात की बड़ी आशंका हो रही है कि वे अब जीवित नहीं हैं।

कातरभाव से चन्द्रगुप्त ने कहा—मुझे भी ऐसा ही लगता है। कल रात्रि में चित्रगुप्त की माँ से मैं यही बात कह रहा था।

उत्सुक होकर सुनील ने पूछा—आपकी बात सुनकर उन्होंने क्या कहा ? वे क्या अनुमान करती हैं ?

"उन्होंने कहा कि जब कोई सुराग ही नहीं लग रहा है तब वह जीवित है या नहीं, यह कुछ स्थिर रूप से नहीं कहा जा सकता। एक न एक दिन वह रहस्य खुलकर ही रहेगा।"

कुछ क्षण के विराम के बाद बड़े क्लेश से चन्द्रगुप्त ने कहा—परन्तु मेरे दिन तो अब बीत चुके हैं, पुत्र-शोक से हृदय विदीर्ण होता जा रहा है। रह-रहकर कलेजे में इतने जोर की पीड़ा मालूम पड़ती है कि अब अचेत होकर गिरना ही चाहता हूं, मेरी मृत्यु होने में विलम्ब नहीं है।

जरा देर में किसी प्रकार अपने को संभालकर चन्द्रगुप्त ने फिर कहा—मेरी मृत्यु के बाद किशोर मेरा उत्तराधिकारी होगा। परन्तु इतने क्लेश से मैंने जो यह सम्पत्ति उपार्जित की है, किशोर के हाथ में पड़कर वह नष्ट-भ्रष्ट होती जा रही है, यह चिन्ता मृत्यु के बाद भी मेरी आत्मा को शान्ति से न रहने देगी।

"तो शायद किशोर का हिसाब-किताब ठिकाने से नहीं रहता वे चंचल प्रकृति के आदमी हैं ?"

"हिसाब-किताब ? वह पूरा उड़ाऊ बीर है! चंचल प्रकृति का क्यों कहते हो उसे ? वह तो एकदम से उच्छृंखल है, निकम्मा है!"

चन्द्रगुप्त दुःखी होकर फिर चुप हो गये। कुछ क्षण तक नीरव रहने के बाद उन्होंने कहा—अच्छा, आज तुम किस ओर खोज करोगे कुछ निश्चय किया है ?

"मैं अच्छी तरह से चित्रगुप्त के कमरों में खोजकर देखना चाहता हूं।

"अच्छी बात है, यही करो। परन्तु वे सब कमरे तो कितनी बार खोजकर देखे जा चुके हैं उनमें तुम्हें किस बात का पता चल सकेगा ?"

"क्या चित्रगुप्त के कमरे से कोई गुप्त रास्ता निकला हुआ है या उसके फर्श में कोई चोर दरवाजा है ?"

"नहीं, वह सब कुछ नहीं है बीच-बीच में दो-एक चोर-कोठरियाँ हैं।

'चोर-कोठरी' का नाम सुनकर सुनील ने उत्सुक होकर पूछा—तो क्या इस मकान में चोर-कोठरियाँ भी हैं ?

चन्द्रगुप्त ने कहा—हाँ, चोर-कोठरियाँ हैं अवश्य; परन्तु वे तो बार-बार खोजकर देखी जा चुकी हैं। इसके सिवा किसी चोर-कोठरी में चित्रगुप्त जाने ही क्यों लगा !

जरा-सा इधर-उधर करके सुनील ने कहा—उन कोठरियों को क्या आपने स्वयं देखा है ?

"नहीं, मेरे नौकरों ने देखा है। उन्होंने (अन्नपूर्णा) भी देख लिया है

सुनील के मन में संदेह उत्पन्न हो गया। उन्होंने देखा है और नौकरों ने देखा है। चोर-चोर मौसेरे भाई ! अन्नपूर्णा के विरुद्ध स्वामी से कोई बात सुनील कह न सका। परन्तु चन्द्रगुप्त से उसने पूछा—क्या आपके सभी नौकर विश्वासपात्र हैं ? किसी के सम्बन्ध में किसी प्रकार का संदेह नहीं किया जा सकता ?

"अवश्य विश्वासपात्र हैं ! मेरे अधिकांश नौकर बहुत पुराने हैं।"

"क्या वे लोग आपके तथा गृहिणी के पूर्णरूप से अनुगामी हैं ?"

"बिलकुल ! विशेषरूप से उनके। वे सब नौकरों तथा नौकरानियों को अपने लड़के-लड़कियों की ही तरह मानती हैं। इससे उनमें से भी कोई ऐसा नहीं है, जो उनके लिए प्राण देने को तैयार न रहता हो।"

जरा-सा इधर-उधर करके सुनील ने पूछा—चाची जी का सबसे अधिक विश्वास पात्र नौकर कौन है ?

रामू ! वह उनके पिता के यहाँ का पुराना नौकर है। विवाह होने पर वह उनके साथ में आया है। तब से वह यहीं रहता है।"

"क्या वह स्वभाव का गम्भीर आदमी है.? किसी तरह के लपझप में तो नहीं रहता ?"

"नहीं, वह बड़ा गम्भीर है। बहुत कम बोलता है। किसी से वैसा मिलता-जुलता नहीं। क्रुद्ध होते तो कभी किसी ने उसे देखा ही नहीं।"

इतने में एक नौकर ने आकर चन्द्रगुप्त से कहा—हुजूर कोई सूचना देने आया है।

सुनील को वहीं छोड़कर चन्द्रगुप्त उतावली के साथ दूसरी ओर चले गये।

सुनील गृहिणी तथा उनके पिता के यहाँ से आये हुए नौकर रामू की आकृति का अध्ययन करने लगा। इस अध्ययन से वह इस परिणाम पर पहुँचा कि घर भर में उन्हीं दो आदमियों के मुख-मंडल पर किसी प्रकार के उद्वेग का भाव नहीं है। इससे उन दोनों के प्रति सुनील के मन में बहुत अधिक संदेह होने लगा। उसने सोचा कि चित्रगुप्त को क्या हुआ है, यह बात यदि निश्चित रूप से इन्हें न मालूम होती तो ये लोग इस तरह उद्वेगहीन नहीं हो सकते थे। घर भर में एक और व्यक्ति के सम्बन्ध में सुनील को ऐसा मालूम पड़ने लगा कि मानो यह भी बहुत ही शान्त है, किसी प्रकार की चिन्ता या उद्वेग से इसका हृदय रहित है। वह थी घर की एक दासी। उसकी समस्त भाव-भंगी एक ऐसे व्यक्ति की-सी जान पड़तीं जिसे मानो किसी से किसी प्रकार की ममता ही नहीं है, वह उदासीन है। काम-काज जब कोई करना होता तो वह बिलकुल मशीन की तरह, किसी काम में मानो उसे जोर लगाना ही नहीं पड़ता है।

सुनील ने रंग से पहचान लिया कि वही दासी गृहिणी की मुख्य दासी है और यह उनकी विश्वासपात्र है। वह दासी बीच-बीच में रामू के कार्य में भी हाथ बटाया करती और कार्य-कारण से जब कोई नौकर या दासी अनुपस्थित हो जाता तो भी दौड़-दौड़कर वह सारा काम संभालती फिरती।

सुनील के मन के भाव दासी भी ताड़ गई। उसने समझ लिया कि यह आदमी मुझे संदेह की दृष्टि से देखता है। इससे वह कुछ घबराने

सी लगी। रह-रहकर आँख बचाकर वह सुनील की ओर ताक भी लिया करती थी। इससे सुनील का संदेह और भी बढ़ने लगा। ताराचन्द से बात ही बात में सुनील ने मालूम कर लिया कि इस दासी का नाम कौशल्या है।

स्वयं घर की मालकिन के ऊपर सन्देह! यह बात न तो मुँह से निकालते बनती थी और न कहे बिना रहा जाता था। सुनील बड़े संकट में पड़ गया। उसने यह निश्चय किया कि स्वामी के समक्ष स्त्री के विरुद्ध सन्देह प्रकट करने के लिए जब तक कोई उपयुक्त प्रमाण न खोज लिया जाय तब तक चन्द्रगुप्त से कुछ कहना ठीक न होगा। इस विचार से सुनील बड़ी तत्परता के साथ प्रमाण संग्रह करने का उद्योग करने लगा। वह एक उपद्रवी बालक की तरह घर-भर में इधर से उधर और उधर से इधर व्यग्रभाव से घूमता फिरता। जिस कमरे में उसके प्रवेश करने की किसी को कोई आशा नहीं होती थी; उस कमरे में भी वह घुस जाया करता था। किसी कमरे में प्रवेश करते समय किसी को आहट न मिल सके, इस बात की सुविधा के लिए उसने पैर में जूते पहनना छोड़ दिया। सुनील के जरा-सा शान्तभाव से एक स्थान पर बैठने या विश्राम करने का कोई निर्दिष्ट समय नहीं था। या यों कहिए कि विश्राम करना उसने एक प्रकार से छोड़ ही दिया था।

अपनी इस दौड़-धूप के कारण सुनील ने दिन भर में कई बार अन्नपूर्णा, रामू और कौशल्या को फिस-फिस करके बातें करते हुए देखा। कभी कौशल्या और अन्नपूर्णा एक साथ मिलीं, कभी रामू और कौशल्या में बातें हो रही थीं, कभी अन्नपूर्णा और रामू एक स्थान पर देखने में आये तो कभी ये तीनों ही आदमी एक स्थान पर मिले! परन्तु सुनील पर जैसे ही इन लोगों की दृष्टि जाती; वे सब पृथक्-पृथक् होकर विपरीत दिशा को चल देते और अलग-अलग कामों में लग जाते।

घर-भर में चक्कर लगाने के बाद सुनील ने टहलते-टहलते जाकर देखा तो ताराचन्द उतावली के साथ गाड़ी जोत रहा था। उससे पूछने पर सुनील को मालूम हुआ कि सुनीता बीबी आ रही हैं, उन्हें लेने के लिए वह स्टेशन जा रहा है।

अस्तबल से लौटकर आते-आते सुनील ने देखा तो चन्द्रगुप्त चिन्तित-भाव से टहल रहे थे। सुनील को देखते ही वे बोल उठे—सुनीता आ रही है। किस तरह मैं उसे इस सर्वनाश का हाल बतलाऊँगा!

विषादमयी दृष्टि से चन्द्रगुप्त को ओर ताकता हुआ सुनील उनके साथ ही साथ चुपचाप द्वार के सामने टहलने लगा। टहलते ही टहलते वह एक बार झटपट भीतर घुस गया और सारा घर घूमकर देख आया।

लगभग ग्यारह बजे गाड़ी की घड़घड़ाहट और घोड़े की टाप सुनाई पड़ी। जान पड़ा कि गाड़ी लौटी आ रही है। आगन्तुकों के स्वागत के लिए अन्नपूर्णा भी पति की बगल में आकर खड़ी हो गईं। सुनील जरा कुछ दूर खड़ा रहा। गाड़ी अहाते का टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता तय करती हुई क्रमशः द्वार के समीप आ गई। उस पर तीन आदमी बैठे हुए थे। सुनीता की बगल में बैठा था किशोर और दूसरी बगल में सुनीता का एक छोटा भाई। उन्हें देखते ही चन्द्रगुप्त ने कहा—किशोर भी तो इन्हीं लोगों के साथ आ रहा है! इसके उत्तर में अन्नपूर्णा तत्काल ही बोल उठीं—शायद उसी गाड़ी पर वह भी किसी स्टेशन से सवार हुआ है।

चन्द्रगुप्त ने कहा—तब तो सुनीता को किशोर से सारा हाल मालूम हो गया होगा। अच्छा ही हुआ, अब मुझे यह दुःसंवाद अपने मुँह से उसे न सुनाना पड़ेगा।

चन्द्रगुप्त ने शान्ति की ऐसी साँस ली, मानो उन्हें किसी बहुत बड़े संकट से छुटकारा मिल गया है।

गाड़ी आकर द्वार के पास खड़ी भी न हो पाई थी कि साईस उस

पर कूद पड़ा और बढ़ कर उसने द्वार खोल दिया। गाड़ी का द्वार खुलते ही व्यग्र भाव से सुनीता उस पर से कूद पड़ी और चन्द्रगुप्त तथा अन्न-पूर्णा के समीप आकर उनकी पद-धूलि ग्रहण करती हुई उत्कण्ठित स्वर से बोली—लौट कर आये हैं वे ? कोई खबर नहीं मिल सकी, ऐसी बात मुझसे न कहिएगा।

चन्द्रगुप्त के दुःख का आवेग बहुत बढ़ गया। मुंह से कोई बात न निकाल कर उन्होंने मस्तक हिला दिया। अन्नपूर्णा होंठ से होंठ दबाए हुए कठोर और स्तब्ध हुई खड़ी रही।

सुनीता अभी तक आशा-आशंका की खींचा-तानी में पड़ कर किसी प्रकार अपने आपको सँभाले हुए थी। किन्तु उसकी अन्तरात्मा में वेदना का जो अत्यधिक उद्वेग था उसे रोक रखने में अब वह समर्थ न हो सकी। वक्ष पर मस्तक रख कर वह फफक-फफक कर रोने लगी।

सुनीता को देखते ही सुनील ने यह समझ लिया कि इसे देखते ही चित्रगुप्त मुग्धभाव से इसके प्रेम में पड़ गया है, उसका कारण क्या है ? सुनीता के शरीर का गठन, उसके मुख की आभा तथा अंग-प्रत्यंग का लावण्य, यह सब इतना आकर्षक है कि चित्त की ओर अपने आप ही आकर्षित हो उठता है। उसकी दृष्टि की स्निग्धता तथा तीक्ष्णता और मुख पर कोमलता तथा दृढ़ता के भावों का सम्मिश्रण देख कर यह अनु-मान किये बिना कोई भी नहीं रह सकता कि यह एक परम तेजस्विनी और बुद्धिमती रमणी है। शरीर का रंग उसके उषा के प्रथम आभास के समान गुलाबी था; किन्तु उस समय दुश्चिन्ता और शोक के उद्वेग के कारण उस पर पीलापन आ गया था।

सुनील मुग्ध और प्रशंसापूर्ण दृष्टि से सुनीता को ताक रहा था, एकाएक किशोर की बात सुन कर सुनीता की ओर से हट कर उसकी दृष्टि किशोर की ओर गई।

किशोर मन्थर गति से पिता की ओर बढ़ा और बिना किसी प्रकार

के उद्वेग का भाव प्रकट किये ही शान्त भाव से उसने पूछा—क्या अभी तक कहीं से कोई खबर नहीं आई बाबू जी ?

पिता के उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही किशोर ने अपनी दृष्टि सुनील की ओर फेरी और पिता की ओर संकेत करके वह बोला—ये शायद भैया के वे ही मित्र सुनील बाबू हैं ?

चन्द्रगुप्त के मस्तक हिलाकर स्वीकारात्मक उत्तर देते ही किशोर सुनील की ओर बढ़ा और उसकी ओर हाथ बढ़ाकर बड़े ही अनुराग के साथ बोला—आपके आने का समाचार पाकर भैया कितने प्रसन्न हुए थे ! आपसे यदि मुलाकात हो जाती तो कितने सुखी होते वे !

सुनील ने किशोर से हाथ मिलाया और तीक्ष्ण दृष्टि से उसके मुँह की ओर ताकते हुए कहा—चित्रगुप्त कहाँ लापता हो गये ? क्या आप को उनके सम्बन्ध में कुछ मालूम नहीं हो सका अभी तक ?

किशोर ने उदासीन भाव से कहा कितनी ओर तो खोज की जा रही है ! मैं भी कई जगह से खोजकर आ रहा हूँ। परन्तु अभी तक तो कोई पता चला नहीं ! सोचा था कि कहीं वे सुनीता के पास न हों।

किशोर की यह बात सुनकर सुनील ने एक बार तीक्ष्ण दृष्टि से उसके मुँह की ओर ताका, बाद को क्रमशः अन्नपूर्णा और सुनीता की ओर भी उसने उसी प्रकार की दृष्टि से ताका। किशोर के मुख पर उसे किसी प्रकार का उद्वेग का चिह्न तक नहीं दिखाई पड़ा सुनीता अपना मुख अन्नपूर्णा के वक्ष में छिपाये हुए थी, इससे उस पर सुनील की दृष्टि ही नहीं ठीक से पड़ सकी। किन्तु सुनील ने देखा कि अन्नपूर्णा का शरीर जरा सा कम्पित हो उठा है। उसके मुख पर संकोच की छाया उदित हो आई है और उसने अपनी दृष्टि नीची कर ली है सुनील ने देखा कि इस दृष्टि से लज्जा और वेदना का भाव बिखरा पड़ रहा है।

सुनील के मन में यह बात आई—किशोर साफ झूठ बोल रहा है, यह बात शायद उसकी माँ को मालूम हो गई है। इसलिए पुत्र की मिथ्या-

वादिता के कारण वह लज्जा और संकोच का अनुभव कर रही है।

किशोर की बात सुनकर सुनीता और भी उच्छ्वसित होकर रो पड़ी।

अपने नेत्रों का जल किसी को दृष्टिगोचर न होने देने के विचार से चन्द्रगुप्त घर के भीतर चले गये। अन्नपूर्णा ने भी सुनीता को लिये हुए घर के भीतर प्रवेश किया। उन सबके पीछे-पीछे किशोर भी गया। सुनील जरा देर तक तो इधर-उधर करता रहा, बाद को वह किशोर को माँ के सामने खड़ा हुआ देख कर उन दोनों की उस समय की आकृति का अध्ययन करने के विचार से भीतर गया।

स्नान और भोजन से निवृत्त होने के बाद सब लोग जब अपने-अपने कमरे में विश्राम करने गये तब सुनील अपने कमरे में बन्दी होकर विश्राम के सुख का उपभोग करने में समर्थ नहीं हो सक । चित्रगुप्त के कमरे में खूब ध्यान से खोज कर एक बार फिर देखने के लिए वह उस एकान्त कोने की ओर चला । कमरे के समीप पहुंचते ही उसके कान में किशोर का कंठ-स्वर पहुँचा । बहुत ही कोमल और सान्त्वनापूर्ण स्वर में वह कह रहा था—व्यर्थ में रोओ न मेरी रानी ! रोने से लाभ क्या होगा ? जो जा चुका, वह रोने से लौट तो आयेगा नहीं ! सम्भवत: उनके अदृश्य होने का कोई ऐसा विशेष कारण है, जिससे कि वे लौटकर घर नहीं आ रहे हैं । भविष्य में आ सकेंगे, इसकी भी वैसी आशा नहीं है । कहीं अपघात से यदि उन्हें प्राणों से हाथ धोने पड़े हों तो भी कोई आश्चर्य नहीं है ।

जरा देर तक खड़े-खड़े ये बातें सुनने के बाद सुनील ने समझ लिया कि किशोर सुनीता को सांत्वना देने का प्रयत्न कर रहा है । जरा आड़ में होकर उसने सुनीता के रोने का शब्द सुना । उसके बाद ही सुनील के कान में सुनीता की आवाज पहुँची—फिर ! कहती हूँ कि मेरे शरीर में हाथ मत लगाओ । वहाँ चारों ओर उनकी स्मृति बिखरी हुई मुझे दृष्टिगोचर हो रही है । ऐसे स्थान और अवसर पर दूसरे व्यक्ति के लिए मेरे हृदय पर अधिकार करना सम्भव नहीं है ।

सुनीता का उस समय का कंठ-स्वर झुंझलाहट और क्रोध से पूर्ण था ।

सुनील ने समझ लिया कि किशोर सुनीता को सान्त्वना देने का प्रयत्न कर रहा है, किन्तु सुनीता उत्तेजित हो रही है । वह चित्रगुप्त की खोज

करने पर जोर देने लगी और बोली—इस तरह सन्तोष करके बैठ जाने पर अपने कर्त्तव्य की अवहेलना करने के कारण हम लोग व्यर्थ में पाप के भागी होंगे। तुम उनकी खोज नहीं कर रहे हो, यह बहुत अनुचित बात है। दो दिन का बहुमूल्य समय तुमने मेरे यहाँ निरर्थक बिता दिया।

किशोर ने कहा— कितने आदमी तो खोज रहे हैं! कौन-सी ऐसी जगह बची है, जहाँ खोजना आवश्यक है ?

इसके बाद ही सुनील को ऐसा लगा कि मानो सुनीता रुष्ट होकर उठ पड़ी और उस कमरे से निकल रही है। इससे वहाँ से भागने के लिए पीछे की ओर घूमते ही सुनीता का रोषपूर्ण स्वर उसके कान में पहुँचा—आह, क्या करते हो ? हाथ मत पकड़ो !

क्षण भर में सुनील को कमरे से उसके निकल आने की आहट मिली। इससे वह पैर बढ़ाता हुआ भागा।

घर से बाहर आकर टहलते-टहलते सुनील सोचने लगा कि चित्रगुप्त के अन्तर्द्धान होने में उसकी विमाता तथा सौतेले भाई का काफी हाथ अवश्य है। किसी प्रकार का षड्यन्त्र करके इन माता-पुत्र ने चित्रगुप्त को मार्ग के कंटक के समान हटाकर दूर कर दिया। परन्तु कौन-सा प्रमाण सामने रखकर इस तरह की अनहोनी बात लोगों के सामने मुँह से निकालूँ और सबके मन में इसे बैठाल सकूँ ?

सुनील टहल ही रहा था कि तेजी से पैर बढ़ाती हुई सुनीता भीतर से निकल पड़ी और उसकी ओर जरा भी ध्यान न देकर अपनी धुन में ही आगे बढ़ने लगी। परन्तु उसके साथ-साथ बढ़कर सुनील ने उसे छेड़ा। उसने सुनीता को अपना परिचय दिया, साथ ही इस बात पर दुःख प्रकट किया कि हमारा आपका परस्पर परिचय कराने के लिए चित्रगुप्त उपस्थित नहीं है।

सुनीता को सुनील से अश्रद्धा हो गई थी। उसने सोच रखा था कि यह निश्चिन्त होकर यहाँ खूब कसकर भोजन कर रहे हैं और बहुत जोर मारा तो जरा-सा इधर-उधर टहलने लगे। इसलिए उसने कुछ

बातचीत करने की आवश्यकता नहीं समझी; ज़रा-सा ताककर वह फिर आगे की ओर बढ़ी। सुनील के यह पूछने पर कि आप कहाँ जा रही हैं, सुनीता ने कुछ झुंझलाहट के साथ कहा—उनके भाई तथा मित्र आदि सब जब खोज कर निश्चिन्त हो चुके तो मुझे ही खोजने के लिए निकलना पड़ेगा। मैं स्वयं ही खोजकर देखती हूँ।

महल के पीछे के द्वार से होकर सुनीता ने वन में प्रवेश किया। सुनील सोच रहा था कि अकेली जाने का साहस न करके सम्भवतः मुझसे साथ में चलने को वह कहेगी; परन्तु सुनीता ने उसकी ओर दृष्टि-पात तक नहीं किया। इधर संकोचवश सुनील ने अपनी ओर से यह कहना उचित नहीं समझा कि मुझे भी साथ में ले लीजिए।

सुनीता जिस ओर गई उसी ओर ज़रा देर तक ताकते रहने के बाद टहलते-टहलते सुनील अस्तबल की ओर चला। परन्तु उसने जब देखा कि अस्तबल में किशोर जा रहा है तो चुपके से जाकर वह अस्तबल के पास लगी हुई प्याल की ढेर में छिप गया। वहाँ से उसने सुना—

"ताराचन्द, 'राकेट' आज कैसा है?"

"बहुत अच्छा तो है हुजूर?"

कुछ क्षण तक किशोर और ताराचन्द की कोई बात नहीं सुनाई पड़ी। अब उस ढेर से निकल आने के विचार से सुनील ने जैसे ही ज़रा-सा झाँककर देखा, किशोर उसी ओर आता हुआ उसे दिखाई पड़ा। इससे सुनील ज़रा और आड़ में हो गया।

प्याल की ढेर के पास आकर किशोर ने बड़ी जल्दी में दबे हुए कंठ से कहा—निकल पड़ो। बड़ा अच्छा अवसर है यह। कहीं कोई नहीं है। मैं घर में लौटा जा रहा हूँ। इसी बीच में तुम अपना कार्य समाप्त कर लो।

सुनील सूखी लकड़ी के तरह बिना हिले डुले वहीं खड़ा रहा। यह कैसा मामला है। अब यहीं पर चित्रगुप्त के अदृश्य होने के कारण का भी आभास मिल जायगा।

बड़ी देर तक छिपे रहने के बाद भी सुनील को जब किसी की आहट न मिली, तब वह प्याल की ढेर से निकल आया और चारों ओर घूमकर देखने लगा कि इसमें कोई छिपा है या नहीं। परन्तु लट्ठ से स्थान-स्थान पर उस प्याल के ढेर को पीटकर भी वह उसमें किसी आदमी के छिपे रहने का पता न चला सका।

सुनील जिस समय प्याल की ढेर के चारों ओर घूमकर देख रहा था उसी समय एक आदमी एक घोड़े की बागडोर पकड़े हुए निकला और तेजी से पैर बढ़ाता हुआ बाहर की ओर चला। तेज़ घोड़ा भी उसके पीछे-पीछे चंचलभाव से चला जा रहा था। वह आदमी चलते-चलते ज़रा-सा घूमकर ज़रा-ज़रा देर के बाद सुनील की ओर ताक लिया करता; इससे सुनील अपने इस व्यर्थ प्रयत्न के लिए कुछ लज्जा का-सा अनुभव करने लगा। ऐसे अवसर पर क्या करना चाहिए, यह निश्चय न कर सकने के कारण कुछ अधीरता का-सा अनुभव करता हुआ सुनील वहाँ से किशोर की खोज में चला।

सुनील ने आकर देखा तो किशोर द्वार के सामने कुछ व्यग्र और चंचलभाव से टहल रहा था। उसके सामने की ओर बढ़ने पर भी किशोर ने सुनील की ओर ज़रा-सा देखा तक नहीं, इससे सुनील ने भी उससे बोलना उचित नहीं समझा, वह फलों की क्यारियों की ओर बढ़ गया और इस प्रकार का भाव दिखाने लगा कि मानों घूम-घूमकर वह फूलों की बहार देख रहा है।

ज़रा ही देर के बाद सुनील ने देखा कि ताराचन्द के साथ शोर-गुल करते हुए कई नौकर आ पहुँचे। वे सब बहुत अधिक व्यग्रता का भाव प्रदर्शित करते हुए एक साथ बोल उठे—फिर बहुत बड़ा नुक़सान हो गया हुज़ूर, फिर बहुत बड़ा नुक़सान हो गया। राकेट हुज़ूर, राकेट।

विस्मय का भाव प्रकट करते हुए किशोर ने कहा—एँ! राकेट! कहाँ गया? कहीं छुड़ाकर भाग तो नहीं गया?

किशोर को इस प्रकार का विस्मय का भाव प्रकट करते हुए देखकर

सुनील उसकी मनोवृत्ति पर दुःखी होने लगा। उसने सोचा कि प्याल की ढेर में छिपे-छिपे मैंने इसकी जो बातें सुनी हैं, उनसे इस राकेट के गायब होने का हुत अधिक सम्पर्क है। मेरे देखते-देखते वह गायब भी हुआ है। परन्तु उस समय मैंने यह समझा था कि कोई साईस शायद इसे टहलाने के लिए ले जा रहा है।

किशोर के इस प्रश्न के उत्तर में ताराचन्द ने कहा—नहीं हुजूर, घोड़ा भगा नहीं, चोर उसे खोल ले गया है। साथ में जीन-लगाम तथा उसकी साज वगैरह भी सब ले गया है।

किशोर बोल उठा—तब तो पिता जी को इसकी सूचना देनी चाहिए।

बाहर का कोलाहल सुनकर चन्द्रगुप्त भी उतावली के साथ भीतर से निकल आये। उन्होंने सोचा था कि शायद चित्रगुप्त का कोई समाचार मिल गया है। परन्तु जब उन्होने राकेट के गायब होने का हाल सुना तब वे और भी दुखी हुए। उन्होने कहा—शायद इस घर में अनिष्ट ही होता जायगा। पहले चित्रगुप्त गायब हुआ, बाद को उसका घोड़ा भी गायब हो गया। देखें, अब और क्या-क्या होता है? अन्त में दुःखी भाव से भीतर चले गये।

सुनील यद्यपि निश्चित रूप से जानता था कि घोड़ा किशोर के षड्यन्त्र से ही गायब हुआ है; किन्तु कोई प्रमाण न होने के कारण वह उसके पिता के सामने यह बात मुँह से निकालने का साहस न कर सका।

१०

वन में बड़ी देर तक भटकने के बाद सुनीता शोकाकुल भाव से लौट आई। उसे देखते ही यह अनुमान किया जा सकता था कि निर्जन वन में एकान्त पाकर यह खूब जी खोलकर रोती रही है। उसकी रूप-रेखा से ही यह स्पष्ट था कि सुनीता की यह यात्रा निष्फल हुई है, इस-लिए उससे किसी ने कुछ पूछा नहीं। शोक, दुःख और चिन्ता से व्यग्र होकर सभी लोग गम्भीरभाव से बैठे रहे। स्वयं सुनीता भी कुछ नहीं बोली। केवल किशोर ने सुनीता के मुँह की ओर ताकते हुए कहा—कोई अत्यन्त आवश्यक कार्य आ जाने के कारण वे घर से चले गये हैं, किसी से कुछ बतलाने का अवसर उन्हें नहीं मिला। अवकाश न मिलने के कारण सम्भवतः वे हम लोगों को कोई पत्र भी नहीं लिख सके। कोई आश्चर्य नहीं कि उनका पत्र रास्ते में ही गुम हो गया हो। पोस्टआफिस के कर्मचारियों की असावधानी के कारण कितने पत्र रास्ते में नष्ट हो जाया करते हैं।

मनुष्य का मन रहस्यों का एक अद्भुत आगार है। वह कभी-कभी अकारण और कभी-कभी नाम-मात्र के कारण से शंकित हो उठता है और तिल को ताड़ करके विभीषिका की सृष्टि कर लेता है। इसके विपरीत चाहे वह कितनी ही अधिक चिन्ता में पड़ा हो, उसके हृदय को कितने ही भयंकर संदेह और शोक का भाव क्यों न आच्छादित किये हो; किन्तु उस अवसर पर यदि दो-चार आशाजनक बातें सुनने को मिल जायँ तो उनका अवलम्बन करके वह सान्त्वना प्राप्त करने का प्रयत्न करता है, उसे इस बात पर विचार करने की प्रवृत्ति नहीं होती कि यह आशाजनक बात सम्भव है या नहीं। इसी प्रकार किशोर की यह आशा-

जनक वाणी चन्द्रगुप्त और अन्नपूर्णा को सन्त्वना देने में बहुत कुछ समर्थ हो गई। चन्द्रगुप्त ने कहा-- कोई ऐसी ही बात हो गई होगी। अन्यथा कोई ऐसा कारण तो नहीं मालूम पड़ता कि वह स्वयं छिपकर भाग गया हो, या किसी ने गुप्त रीति से उसकी हत्या कर डाली हो।

प्रसन्न-भाव से पुत्र के मुंह की ओर ताकती हुई अन्नपूर्णा बोली—तेरे मुँह में फूल-चन्दन पड़े। भगवती जगज्जननी करें कि तेरी ही बात सच हो। चित्रगुप्त कुशलपूर्वक घर लौट आयेगा तो मैं धूम-धाम से भगमती की पूजा करूँगी।

किशोर की बात पर विश्वास न कर के सुनीता मस्तक हिलाती हुई बोली—मेरा मन तो यही कहता है कि शायद वे कहीं किसी संकट में पड़ गये है। यदि मैं उनके साथ में रहकर उनकी विपत्ति में भाग ले पाती!

सुनीता उस समय अपने आपको बहुत ही असहाय अनुभव कर रही थी। उसके हृदय में बार-बार यही बात आती कि ऐसे अवसर पर मेरी कोई भी शक्ति काम नहीं दे रही रही है। चिन्ता में वह बहुत ही अधीर, बहुत ही व्यग्र हो उठी।

सुनील कुछ बोला नहीं। उसके हृदय में यह धारणा क्रमशः दृढ़ होती जा रही थी कि किशोर और उसकी माँ इन दोनों ही का किसी गुप्त षड़यन्त्र से बहुत गहरा सम्बन्ध है और ये ही लोग चित्रगुप्त के गायब हो जाने या उसके प्राणनाश के मूल कारण हैं। चित्रगुप्त का पढ़ने का कमरा मानो सुनील को प्रबलभाव से अपनी ओर आकर्षित करने लगा। उसके मन में जो धारणा निश्चित रूप से जम गई थी, वह और वह भी अधिक दृढ़ होती गई। उसने यह निश्चय कर लिया कि चित्रगुप्त के पढ़ने वाले कमरे में ही मृत्यु के रहस्य का सूत्र छिपा हुआ है, अतएव इस कमरे को खूब सावधानी के साथ देखते रहना चाहिए।

सुनील ने देखा कि इस समय सभी लोग एक ही कमरे में जमे हुए

हैं। इससे वह चुपचाप वहाँ से खिसक आया। उसने सोचा कि इस समय दिन के उजाले में चित्रगुप्त के कमरे को खोज कर देखने में बड़ी सुविधा होगी।

सुनील अब चित्रगुप्त के पढ़ने के कमरे के सामने आया तब डरते-डरते बहुत दबे पाँव से द्वार के पास गया और उसमें जो चुल्ला लगा था उस पर उसने हाथ रख दिया। चुल्ला भीगा हुआ नहीं था। झुककर उसने देखा तो उसमें कोई दाग भी नहीं लगा था। सबेरे खूब घिसकर माँजने के बाद वह धो डाला गया था। इससे सुनील का सन्देह और भी दृढ़ हो उठा। वह सोचने लगा कि दरवाजों में लोहे के जो चुल्ले लगे हैं, वे साफ रखने के लिए नियमितरूप से घिसकर माँजे और धोये जाते हैं या केवल रक्त का दाग मिटाने के ही लिए यह विशेषरूप में माँजा-धोया गया है।

दरवाजे को ठेलकर सुनील ने कमरे के भीतर प्रवेश किया। ध्यान-पूर्वक देखने पर उसे मालूम हुआ कि कमरे में जो-जो चीजें रक्खी हुई थीं, वे वैसी की वैसी रक्खी हैं, कोई भी चीज किसी ने इधर-उधर नहीं की। केवल एक खिड़की भर बन्द कर ली गई है। कल रात को सुनील ने जब कमरे में प्रवेश किया था तब वह खिड़की खुली हुई थी। उस समय उसने उसकी ओर विशेष ध्यान देकर देखा नहीं था। परन्तु इस समय जब उसने देखा कि यह खिड़की बन्द कर दी गई है तब उसे निश्चय हो गया कि निःसन्देह इस खिड़की के साथ रहस्य का बहुत ही घनिष्ट सम्पर्क है।

कमरे में जितनी वस्तुएँ थीं, उन सबको सुनील एक-एक करके बहुत ही ध्यान से देखने लगा। उसने देखा कि कमरे की दीवारें बहुत मोटी-मोटी हैं। इससे जगह-जगह पर धक्का दे-देकर वह देखने लगा कि कहीं से धम-धम की आवाज तो नहीं आती। ऐसा वह इसलिए कर रहा था कि दीवार में यदि कहीं कोई चोर-कोठरी हो तो वह मालूम पड़ जाय; क्योंकि दीवार जहाँ पोली होगी वहाँ से धम-धम की आवाज

अवश्य होगी। कमरे भर में घूम-घूमकर देखते-देखते सुनील की दृष्टि एक बड़े से टेबिल पर पड़ी। उस टेबिल के ऊपर एक सुजनी पड़ी हुई थी, जिस पर फूलपत्ती का बहुत ही उत्तम ढंग का काम किया गया था। सुजनी टेबिल के पावों के नीचे तक झूल रही थी। सुनील कल इस कमरे की प्रायः सभी चीजें देख गया था। केवल इतना ही उसने नहीं देखा था कि इस टेबिल के नीचे क्या है ?

टेबिल के ऊपर की सुजनी का एक किनारा उठाकर सुनील ने जब झाँककर देखा तो टेबिल के नीचे लकड़ी का एक बड़ा-सा सन्दूक रक्खा हुआ दिखाई पड़ा। उस सन्दूक की लम्बाई इतनी थी कि आदमी उसमें आसानी से लेट सकता था। चौड़ाई में भी वह अधिक नहीं था। सन्दूक बिलकुल नया नहीं था। ऊपर उसके पीतल की चद्दर जड़ी हुई थी और पीतल का ही उसमें कब्जा लगा हुआ था। उसी से भिड़ाकर टीन का एक और सन्दूक रख दिया गया था, जो सामने की ओर से उसे ढँके हुए था। इन सन्दूकों को देखकर सुनील एक अद्भुत प्रकार की उत्तेजना का अनुभव करने लगा। उसका हृदय धड़कने लगा। बिजली की-सी तेजी के साथ उसके हृदय में यह प्रश्न उदित हो आया कि क्या चित्रगुप्त की हत्या करके इसी बक्स में उसे बन्द कर दिया गया है ?

बक्स की ओर देखते ही सुनील काँप उठा। परन्तु उसे खोलकर देखने से पहले उसे यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि इस सम्बन्ध में चन्द्रगुप्त से आज्ञा ले ली जाय। कमरे में जाकर सुनील ने जब देखा तब चन्द्रगुप्त और अन्नपूर्णा केवल दो ही व्यक्ति बैठे हुए थे। वहाँ पहुँचते ही सुनील ने कहा—चाचा जी, मेरा एक प्रस्ताव है। चित्रगुप्त के पढ़ने वाले कमरे में लकड़ी का जो एक सन्दूक......।

सुनील की बात काटकर अन्नपूर्णा उतावली के साथ बोल उठीं—उस सन्दूक में क्या खोजना है ?

अन्नपूर्णा के मुख पर अपनी तीक्ष्ण दृष्टि जमाए हुए सुनील ने पूछा—क्या है उस सन्दूक में ?

अन्नपूर्णा ने उत्तर दिया—चित्रगुप्त के ही छुटपन के स्मृति चिन्ह हैं उसमें। कुछ फटी-पुरानी पुस्तकें हैं और कुछ टूटे हुए खिलौने। घर में ही चित्रगुप्त कहीं छिपा है, यह कल्पना अपने मन से तुम लोग निकाल दो सुनील......।

इसके बाद पति की ओर ताककर वे कहने लगीं—किशोर ने जो कुछ कहा है, उसी पर विश्वास करने का हम लोगों को प्रयत्न करना चाहिए। चित्रगुप्त अवश्य किसी आवश्यक कार्य से कहीं चला गया है। सम्भवत: उसने सूचना भी दी है; किन्तु चिट्ठी हम लोगों के पास तक पहुँच नहीं पाई। आश्चर्य नहीं कि वह आज ही लौटकर आ जाय, उस समय हमें इस बात के लिए लज्जित होना पड़ेगा कि हम उसके सम्बन्ध में इस प्रकार की ऊँट-पटाँग की कल्पनायें कर रहे थे।

अपनी रोषमयी दृष्टि अन्नपूर्णा के मुख पर गड़ाकर मानो उसे मिथ्यावादिनी प्रमाणित करने के ही विचार से सुनील ने जरा कुछ उच्च स्वर से कहा—इसे निश्चए समझिय आप कि चित्रगुप्त फिर लौटकर नहीं आयेगा।

चन्द्रगुप्त और अन्नपूर्णा ने अवाक् होकर सुनील की ओर ताका। सुनील क्रुद्धभाव से कमरे से निकलकर तेजी के साथ चला गया।

सुनील एकान्त कमरे में पड़े-पड़े समस्त दिन इसी बात पर विचार करता रहा कि अन्नपूर्णा और किशोर ने मिलकर जो षडयन्त्र कर रक्खा है, उसके रहस्य का किस प्रकार उद्घाटन किया जाय। दूसरे वक्त जलपान करने के बाद वह फिर चित्रगुप्त के पढ़ने के कमरे की ओर चला। उसने निश्चय किया कि मैं स्वयं उस सन्दूक को खींचकर देखूँगा कि किसी प्रकार वह खोला जा सकता है या नहीं?

कमरे की ओर जाते समय रास्ते में किशोर उसी ओर से लौटकर आता हुआ मिला। सुनील की बगल से वह निकल गया। दोनों में से कोई भी कुछ बोला नहीं। किशोर को देखते ही सुनील ने ताड़ लिया कि यह इस समय बहुत ही व्यग्र है। कोई बहुत ही भयंकर चिन्ता इसके

हृदय में वर्तमान है और यह सम्भवतः चित्रगुप्त के पढ़ने वाले कमरे की ही ओर से आ रहा है।

कमरे के पास पहुँचकर सुनील ने देखा तो उसमें ताला लगा हुआ था। अब सुनील के मन में यह बात आई कि अन्नपूर्णा की ही सलाह से यह ताला कमरे में लगया गया है और कदाचित् अभी इसे लगाकर ही वह लौटा जा रहा है। सुनील यह भी ताड़ गया कि इच्छानुसार किसी भी समय जाकर मैं कमरे की जाँच न कर सकूँ, इसी उद्देश्य से अन्नपूर्णा ने इसमें ताला लगाने का पुत्र को आदेश किया है। यही सब सोचते-सोचते सुनील ने स्थिर किया कि इस कमरे में ही सारा रहस्य छिपा हुआ है, इसलिए इस पर बराबर दृष्टि रखनी होगी।

सुनील के मन में दृढ़तापूर्वक यह बात जमती गई कि कोई भयंकर पाप महल में छिपाया गया है, साथ ही यहाँ कुछ ऐसे व्यक्ति अवश्य हैं, जिनके लिए चित्रगुप्त का अदृश्य हो जाना कोई अज्ञात रहस्य नहीं है। परन्तु वह किसी भी ऐसे सूत्र का आविष्कार नहीं कर सका जो इस सन्देह का समर्थन करके इसे प्रमाणित कर पाता।

रात्रि में भोजन आदि से निवृत्त होने पर सुनील ने सोचा—आज रातभर चित्रगुप्त के कमरे की निगरानी में रहूँगा। आधी रात के समय वह अपने कमरे से चुपके से निकला। जरा दूर बढ़ते ही उसने देखा कि रास्ते में स्थान-स्थान पर जो कपाट हैं, सब बन्द हैं। वे कपाट बहुत बड़े थे और उन्हें खोलने पर इतने जोर का शब्द होने की सम्भावना थी, जिससे कि घर के सभी लोगों की निद्रा भंग हो जाने की आशंका थी, साथ ही सुनील का गुप्त रीति से निगरानी रखने का जो उद्देश्य था उसका भी नष्ट हो जाना अनिवार्य था। इससे वह अपने कमरे में लौट आया।

कमरे के द्वार पर टँगा हुआ पर्दा और पलँग पर बिछा हुआ चद्दर उतारकर सुनील ने उन्हें रस्सी की तरह बट लिया और उसका एक सिरा पलंग के एक पाये में बाँधकर खिड़की से लटका दिया। उस रस्सी

की ही सहायता से सुनील किसी प्रकार नीचे उतर आया। फूल की एक क्यारी में छिपा हुआ वह बैठा रहा । इतने में उसके मस्तक के ऊपर ही एक खिड़की के खुलने का शब्द हुआ। फूल की क्यारी में छिपे-छिपे ही मस्तक उठाकर चन्द्रमा के प्रकाश में उसने देखा कि चित्र-गुप्त के कमरे की खिड़की खुल गई है। उस खिड़की की चौखटों के बीच में गोरे रंग का एक मुँह है और उस मुँह के चारों ओर बहती हुई काली रोशनाई के समान खुले हुए बाल झूल रहे हैं। देखने में रमणी का वह मुख ऐसा जान पड़ रहा था कि मानों फ्रेम में कोई तसवीर जड़ी हुई है। वहीं बैठे-बैठे सुनील ने देखा कि जरा देर तक खिड़की के पास खड़ी रहने के बाद वह रमणी धीरे-धीरे वहाँ से हट गई।

सुनील के मन में अब यह बात आई कि कदाचित् नीचे बगीचे में कोई आदमी छिपा हुआ है और उसी से गुप्त रूप से मिलने के लिए रमणी ने इस प्रकार का संकेत करके उसका आह्वान किया है । इससे वह छिपे-छिपे किसी के पैरों की आहट के लिए निरर्थक प्रतीक्षा करता रहा। खिड़की भी बराबर उसी प्रकार खुली रही। एक घण्टा बीता दो घण्टा बीता, तीन घण्टा बीत गया! अन्त में अधीर होकर सुनील फूलों की क्यारी से निकल आया और उस चद्दर की रस्सी के सहारे से ऊपर चढ़ गया। कमरे में जाकर उसने रस्सी खींच ली। चद्दर खोलकर उसने खूब चुनकर तहाया। पर्दे को भी खूब खींच-खींचकर उसकी सिकुड़न बहुत कुछ ठीक कर दी और यथास्थान टाँग दिया। तब चित्रगुप्त के कमरे में जाने के विचार से उसने बहुत धीरे से अपने कमरे का द्वार खोला।

जरा ही दूर तक अग्रसर होने पर सुनील ने देखा कि चित्रगुप्त के कमरे की ओर जाने की गली के जो कपाट कुछ समय पहले बन्द थे, वे अब खुले हुए हैं। इससे उसका कौतूहल और भी अधिक बढ़ा। चित्रगुप्त के कमरे के सामने पहुँचकर उसने देखा तो उसमें ताला लगा हुआ था। अब सुनील ने अनुमान किया कि जिस रमणी ने इस कमरे में

प्रवेश किया था, उसी के पास इसकी कुंजी है। इतनी देर तक वह कमरे में थी; जाते समय कमरे में ताला लगाती गई है। किन्तु क्षण ही भर के बाद उसके मन में फिर आया—सम्भव है कि यह ताला बराबर कमरे में लगा रहता हो और भीतर कोई ऐसा गुप्त रास्ता हो, जिससे होकर रमणी ने इस कमरे में प्रवेश किया था।

सुनील ने निश्चय किया कि दिन में कमरे को खोलकर खूब सावधानी से देखूंगा तब शायद पता चल सकेगा कि इसमें कोई गुप्त रास्ता है या नहीं। यह सोचकर वह अपने कमरे में लौटा जा रहा था; इतने में किसी कमरे से रमणी की कंठ-ध्वनि सुनाई पड़ी। ऐसा मालूम पड़ा कि मानो वह भय से व्याकुल होकर चिल्ला उठी है!

सुनील चौंक पड़ा। भयभीत होकर अपने कमरे की ओर तेजी के साथ पैर बढ़ाते-बढ़ाते वह सोचने लगा—अब यह कैसा वीभत्स रहस्य है! यह स्त्री है कौन? क्या कारण है जो यह इस प्रकार चिल्ला उठी है?

सुनील को इस बात की बड़ी इच्छा हो रही थी कि इसका रहस्य खोज निकालने का उद्योग करना चाहिए। परन्तु क्षण-भर के बाद ही फिर उसके मन में यह बात आई कि मैं केवल मेहमान भर यहाँ का हूं। अभी अधिक समय मुझे यहाँ आये भी नहीं हुआ, इससे सम्भवतः मेरा जाँच करना ठीक न होगा।

सुनील बीच रास्ते में ठमककर खड़ा हो गया और वह यही सब तर्क-वितर्क करने लगा। इतने में घर के बहुत-से लोगों के जाग उठने तथा दरवाजे खोल-खोलकर बाहर निकालने की आहट उसे मिली। सुनील ने चन्द्रगुप्त का भी कंठस्वर सुना। वे बहुत ही व्यस्त और व्यग्र होकर पत्नी को पुकारते-पुकारते अपने कमरे से निकले आ रहे थे—क्यों जी, क्या हुआ? स्वप्न तो नहीं देख रही हो? तुम डर क्यों गई हो?

अन्नपूर्णा स्वामी के कमरे के पास वाले कमरे में ही रहा करती थी उसी कमरे से फिर एक बार भय से व्याकुल होकर चीत्कार करने की

आवाज आई, उसके बाद ही एक बड़े जोर का ठहाका सुनाई पड़ा। इस प्रकार बहुत ही जोर से हंसने की आवाज सुनते ही सुनील के हृदय का रक्त मानो जम गया।

घर में जितने भी नौकर और नौकरानियाँ थी, वे सभी भयभीत होकर हाथ में लालटेन लिए हुए अस्त-व्यस्त भाव से दौड़ पड़ीं। उन सबके आगे-आगे सुनील भी बढ़ा।

चन्द्रगुप्त ने धक्का देकर पत्नी के कमरे का द्वार खोल दिया। हाथ में लालटेन लिये हुए एक बहुत बड़ा दल उस कमरे में प्रविष्ट हुआ। लालटेन के उजाले में चन्द्रगुप्त ने देखा कि अन्नपूर्णा घुटनों के बल भूमि पर बैठी हुई हैं और हिस्टीरिया के प्रबल आक्रमण से उनका शरीर थर-थर काँप रहा है। उनके काले-काले बाल कन्धे पर से होकर सारे शरीर पर लटक रहे हैं।

अन्नपूर्णा की यह मूर्ति देखकर सुनील चकित हो गया। यही मूर्ति तो वह अभी कुछ समय पहले चित्रगुप्त के कमरे की खिड़की के सामने देख चुका था। इतनी रात्रि के समय चित्रगुप्त के कमरे में उनके जाने का कारण क्या है और वहाँ से लौटकर आते ही इतने जोर से रुलाई और हँसी ही उन्हें क्यों आई ?

चन्द्रगुप्त के स्पर्श करते ही अन्नपूर्णा उनकी गोद में मूर्च्छित होकर लोट पड़ीं। बड़ी कठिनाई से ले जाकर लोगों ने उन्हें बिस्तरे पर सुलाया। इधर अपने कमरे में आकर सुनील इसी समस्या को सुलझाने का प्रयत्न करने लगा, यद्यपि समस्या उत्तरोत्तर जटिल ही होती गई।

११

सवेरा होते ही महल के सभी आदमी अपने-अपने काम में लग गये। रात्रि के समय अन्नपूर्णा को जो हिस्टीरिया हो गया था उसमें किसी की कोई विशेष या असाधारण बात नहीं मालूम पड़ी। लोगों ने यही अनुभव किया कि चित्रगुप्त के वियोग के ही कारण इनकी मानसिक अवस्था में विकार आ गया है। लगातार तीन दिनों से शोक के आवेग को रोक रखने का उद्योग ये करती आ रही हैं। उसी की यह प्रतिक्रिया है, जो एक साथ ही उन्हें हँसी और रुलाई दोनों आईं और बाद को वे मूर्च्छित हो गईं। परन्तु सुनील के मन में यह संदेह जम गया था कि इसमें एक बहुत बड़ा संदेह छिपा हुआ है। इस कारण वह चंचल हो उठा था। सारे घर में वह बराबर घूमता रहता और जो कोई मिलता उसी से कोई न कोई बात छेड़ देता। इस प्रकार लोगों की बात-चीत से भी उसे गुप्त रहस्य का ज़रा-ज़रा आभास मिला करता।

नौकरों तथा नौकरानियों से बातचीत करने पर सुनील को इतना मालूम हो गया कि सुनीता के आविर्भाव के बाद से ही अन्नपूर्णा का हृदय चित्रगुप्त की ओर से कुछ-कुछ खिचने लगा है। बाद को उसके प्रति उनके मन में क्रमशः ईर्ष्या-द्वेष की वृद्धि होती ही गई। उसे यह भी मालूम हो गया कि सुनीता चन्द्रगुप्त के एक मित्र की कन्या है और चित्रगुप्त जब बम्बई में था, तब किशोर से उसकी घनिष्ठता होने लगी थी और सम्भवतः उन दोनों में परस्पर प्रणय का भी सचार हो गया था। परन्तु बम्बई आते ही चित्रगुप्त ने उसके हृदय का अपहरण कर लिया। इधर चन्द्रगुप्त ने भी एक बिल तैयार करके अपनी समस्त सम्पत्ति चित्रगुप्त को ही दान कर दी है, अन्नपूर्णा और किशोर के

लिए उन्होंने कुछ मासिक की ही व्यवस्था की है। सुनीता भी एक धन-वान् की कन्या है और पिता के बिल के अनुसार वह अपनी आधी पैत्रिक सम्पत्ति की अधिकारिणी है। इसलिए किशोर के साथ यदि उसका विवाह हो जाता तो अनायास ही एक बहुत बड़ी सम्पत्ति उसके हाथ में आ जाती। परन्तु किशोर की ओर उसका विशेष आकर्षण न होने के कारण उसके लिए यह आशा भी नहीं रही। इसलिए अन्नपूर्णा चित्रगुप्त को ही किशोर की उन्नति का बाधक समझती है। इसीलिए इधर कुछ दिनों से सौत के लड़के की ओर से विमाता का चित्त प्रतिकूल हो उठा है।

उपर्युक्त बातें मालूम कर लेने पर सुनील के मन में यह निश्चय कर लिया कि किशोर के मार्ग के कंटक-स्वरूप चित्रगुप्त को दूर कर देने के उद्देश्य से षडयन्त्र अवश्य किया गया है और उस षडयन्त्र की प्रधान नेत्री अन्नपूर्णा ही हैं। इतने भयंकर पाप का आचरण करने के कारण उनके मन में जो अत्यधिक ग्लानि उत्पन्न हुई है, वही कल रात्रि में हिस्टीरिया के रूप में प्रकट हुई थी। इधर प्रातःकाल से ही सुनील को ही बहुत ही उद्विग्न देखकर सुनीता उसका मनोभाव ताड़ गई और उसे उदासीन देखकर पहले जो उसके मन में सुनील के प्रति अश्रद्धा का भाव उत्पन्न था, वह जाता रहा। इससे अवसर देखकर वह सुनील के पास गई और बहुत ही विनम्रभाव से नमस्कार कर के बोली—क्या आपकी यह धारणा है कि उनके लापता होने का कारण यहीं इस मकान से मालूम किया जा सकेगा ?

बहुत ही गम्भीर होकर सुनील ने फिस-फिस करके कहा—मेरे मन में तो यह धारणा क्रमशः बद्धमूल होती जा रही है...।

कुछ आवश्यक बातें करने के लिए सुनील सुनीता को लेकर बाहर बगीचे में गया। एक कोने में लताओं का एक कुंज था, उसी में जाकर वे दोनों पत्थर के आसन पर बैठे। सुनील के पूछने पर सुनीता ने बत-लाया कि चन्द्रगुप्त ताऊ तथा मेरे पिता जी की मित्रता बहुत पुरानी है। परन्तु कलकत्ते में आकर जब ये राजा के यहाँ काम करने लगे तब एक

स्थान पर रहने का अवसर मिलने पर दोनों ही परिवारों में बहुत अधिक घनिष्टता हो गई। उस समय वे विलायत में थे।

सुनील के पूछने पर लज्जा से मुंह लाल किये हुये सुनीता ने यह भी स्वीकार किया कि पहले-पहल किशोर से ही मेरा प्रेम हुआ था; क्योंकि उन्हें मैंने कभी देखा नहीं था। किशोर की भव्य आकृति तथा असाधारण साहस देखकर उस समय मैं बहुत प्रभावित हुई थी। वह भी पहली मुलाकात से ही मेरे प्रति प्रेम प्रकट करने लगा था। तब से उसका यह प्रणय-निवेदन बराबर जारी रहा। परन्तु उसका व्यवहार इतना असभ्यतापूर्ण था कि मैं तंग आ जाती और कभी-कभी क्रुद्ध भी हो उठती। बाद को घुड़दौड़ में जुआ खेलकर तथा पिता से लड़-झगड़कर किशोर कुछ दिनों तक गायब रहा, उसने मेरी खोज-खबर नहीं ली। अन्त में बम्बई से लौटकर आने पर उसके भैया ने उसकी खोज की। पिता से भी बहुत-कुछ कहा-सुना और उसे घर में लाकर रक्खा। किशोर फिर तुरन्त ही मेरी ओर आकर्षित हुआ। परन्तु उसके भैया को देखते ही मैं उनके महत्त्व को पहचान गई। अवसर पाकर उन्होंने भी मेरे प्रति प्रेम प्रकट किया। किशोर तथा उनकी माता का बराबर यह उद्योग रहा कि उनकी ओर मेरा ध्यान न जाने पाये; किन्तु मैं इतनी मूर्ख तो हूँ नहीं कि अमूल्य रत्न की उपेक्षा करके केवल ऊपरी तड़क-भड़क के कारण कांच की ओर दौड़ती!

सुनीता ये बातें बड़े कष्ट से कह रही थी। आँखें उसकी भर आई थीं। सुनील के पूछने पर फिर उसने कहा—यह सुनकर कि हम लोगों में परस्पर प्रणय का संचार हो गया है, मेरे माता-पिता तथा उनके पिता बहुत ही प्रसन्न हुए थे। केवल उनकी माँ उस समय चुप होकर रह गई थीं। बाद को मुझे एकान्त में पाते ही ताना-सा देती हुई वे कहने लगीं—तुमने अपना मन पक्का कर लिया है या बाद को चित्रगुप्त को भी छोड़कर किसी और को पसन्द करोगी? किशोर के हिस्से की सभी वस्तुओं पर तो चित्रगुप्त अपना अधिकार जमाता जा रहा है; यहाँ तक कि

उसने उसकी वाग्दत्ता वधू तक को नहीं छोड़ा।

सुनील चिन्ता में पड़ गया। क्षण भर की निस्तब्धता के बाद उसके पूछने पर सुनीता ने कहा—विवाह के सम्बन्ध में मुझमें और किशोर में कभी कोई बातचीत नहीं हुई थी। परन्तु लोगों ने समझ रक्खा था अवश्य कि किशोर के ही साथ मेरा विवाह होगा। मेरी भी ऐसी ही धारणा हो गई थी। अन्त में उसके भाई के साथ मेरा विवाह स्थिर हो जाने पर भी वह मन में यही समझे बैठा रहा कि मानो मैं उसी का प्रणय प्राप्त करने की कामना से बैठी हूं। वह अपने दुस्साहसपूर्ण तथा असभ्य व्यवहार से मुझे सदा ही परेशान किया करता था, परन्तु उसके भाई से मैंने कभी उसकी कोई शिकायत नहीं की।

सुनील के प्रश्नों की सूची तो समाप्त होने को थी नहीं। सुनीता भी बराबर उत्तर देती गई। उसने कहा—ठीक प्रतिद्वन्द्विता की बात तो नहीं कही जा सकती; परन्तु एक स्त्री के व्यवहार के कारण किशोर अपने भाई से चिढ़ा करता था। उस स्त्री का नाम था लता। वह थी एक आश्रयहीन बाल-विधवा। सूरत के एक भाटिया सौदागर के साथ उसके पिता बम्बई से आये थे इस देश में। उसी सौदागर के साधारण वेतन पर वे क्लर्क का काम करते थे। एक बार प्लेग के कारण उसके माता-पिता दोनों मर गए। तब किसी आत्मीय स्वजन का पता न चल सकने पर भाटिया ने लता को सेवा-सदन विधवा-आश्रम' में भर्ती करा दिया। इधर किशोर की माँ के साथ में, सहायता के लिये किसी निराश्रय विधवा को रखने का निश्चय किया गया। इससे सेवा-सदन के अधिकारियों ने यह सोचकर कि बंगाली की लड़की बंगाली के घर में अच्छी तरह रह सकेगी, ताऊ जी की माँग के उत्तर में उसे यहाँ भेज दिया।

सुनील लता के सम्बन्ध की सारी बातें जानने के लिए उत्सुक हो उठा। उसका कौतूहल निवृत करने के विचार से सुनीता ने कहा—लता न तो रूपवती है और न वह नितान्त कुरूपा है। शरीर उसका कुछ साँवले रंग का है। मुख की आकृति भी साधारणतः बुरी नहीं है। परन्तु

उसकी यह बात आरम्भ में ही मुझे बुरी मालूम पड़ने लगी कि वह पुरुषों के मुँह बहुत अधिक लगती है। पढ़ना-लिखना वह जानती है। माता-पिता उसे इस विचार से पढ़ा रहे थे कि विधवा लड़की है, साक्षर रहेगी तो सम्भव है कि आगे चलकर निर्वाह के लिए चार पैसे कमा ले। सेवा-सदन में भी वह पढ़ती रही। बाद को यहाँ आने पर ताई जी तथा किशोर से वह पढ़ा करती थी।

"तो यह कहो कि किशोर उसे पढ़ाया करता था, इसीलिए आपका उस पर विद्वेष है।"

जोर से मस्तक हिलाती हुई सुनीता कहने लगी—नहीं, नहीं, बिलकुल नहीं। लता तो किशोर के भाई के ही साथ घनिष्ठता स्थापित करने के लिए अधिक प्रयत्न किया करती थी। उन्हें अपनी ओर आकर्षित करने के लिये वह तरह-तरह की भाव-भंगियाँ प्रदर्शित किया करती थी। किशोर को इससे बहुत चिढ़ होती थी। लता से इस कारण उसकी खट-पट होती ही रहती। कभी-कभी इसके लिए अपने भाई को भी फटकार देने में आनाकानी नहीं करता था।

सुनील ने फिर जरा-सा हँसकर कहा—मैं ठीक-ठीक टटोल नहीं पाया हूं आपकी कच्ची नस! शायद किशोर के भैया की ओर उसका आकर्षण होने के ही कारण आपका उस पर इतना रोष है।

म्लान मुख से जरा-सा हँसने का प्रयत्न करती हुई सुनीता कहने लगी—आप अब जो चाहे सो कहें; किन्तु लता का हाव-भाव देखते ही मेरा कलेजा जल उठा करता था। अस्तु, अन्त में उससे अत्यन्त ही रुष्ट होकर कौशल्या नामक नौकरानी तथा रामू नामक नौकर के साथ ले जाकर किशोर उसे सेवा-सदन में छोड़ आया।

सुनीता ने कहा—वे बहुत प्रसन्न हुए थे। उन्होंने बाद को मुझसे कहा था कि लता का आचरण मुझे भी बुरा लगता था अवश्य; किन्तु मैं उसे हँसकर इसलिए टाल देता था कि वहीं माँ भी रुष्ट होकर उसे निकाल न दें।

सुनील ने कहा—चित्रगुप्त की इस बात पर आपको विश्वास हो गया था ? यदि कहीं वे आपका मन रखने के ही लिए वैसी बात कहते रहे हों ?

सुनीता रोष में आकर कहने लगी—तब आप अपने मित्र को पहचानते नहीं हैं। आपको अभी मालूम नहीं है कि कितना उदार है उनका हृदय !

सुनील ने मुस्कराते हुए कहा—अपने मित्र को मैं बहुत ही अच्छी तरह से पहचानता हूं, केवल आपकी परीक्षा लेने के विचार से मैंने यह बात कही है। परन्तु एक बात है। अपने भावी स्वामी को तो आपने पहचान लिया है; किन्तु सास को आप अभी तक नहीं पहचान पाई हैं। मुझे कहना न चाहिए; किन्तु नौकरों की आपस की कानाफूसी से मुझे एक बहुत ही वैसी बात मालूम हुई है। उन्होंने भवानी की सौगन्ध खाकर यह प्रतिज्ञा की है कि जब तक उनके शरीर में प्राण रहेंगे, चित्रगुप्त के साथ वे तुम्हारा विवाह न होने देंगी। किशोर के साथ चाहे आपका विवाह न भी हो, किन्तु वे जीवन में यह किसी प्रकार न सहन कर सकेंगी कि चित्रगुप्त आपके साथ विवाह करके वधू के रूप में आपको इस घर में ले आये।

दृष्टि को चिन्ता से व्याकुल किए हुए सुनीता सुनील की ओर ताकती रह गई। उसका मनोभाव ताड़कर वह कहने लगा—इस समय शायद आप यह सोच रही हैं कि चित्रगुप्त की माँ को आपके साथ उसका विवाह होने में जो आपत्ति है, वह भी चित्रगुप्त के इस प्रकार अदृश्य होने का बहुत कुछ कारण है।

सुनीता ने कहा—क्षण-मात्र के लिए मेरे हृदय में यह बात आई थी अवश्य; परन्तु ताई जी इतनी निष्ठुर, इतनी अमानुषिक प्रकृति की हो सकती हैं; यह मैं कैसे कहूं ? लता-जैसी स्त्री के लिए अवश्य यह कोई बड़ी बात नहीं थी।

सुनील ने कहा—संसार में ऐसी-ऐसी अनहोनी बातें प्रतिदिन होती रहती हैं, जिन पर किसी प्रकार विश्वास ही नहीं किया जा सकता। चित्रगुप्त के अदृश्य होने का कारण क्या है, इसका कुछ आभास तो मिल नहीं रहा है, इसलिए हर ओर बहुत ही संदिग्ध दृष्टि रखकर सावधानी के साथ पारस्परिक सहयोग के द्वारा पता लगाना होगा।

सुनीता ने व्यग्रभाव से कहा—आपकी जो भी आज्ञा होगी, मैं प्राणों की बाजी लगाकर भी उसका पालन करने का प्रयत्न करूँगी। इतना कहकर उसने इस बात का संकेत किया कि किशोर आ रहा है, इसलिए यह बातें इस समय स्थगित रक्खी जायँ और तुरन्त ही उसने प्रसंग बदल दिया। वह स्वयं सुनील के व्यक्तिगत जीवन के सम्बन्ध की ही विभिन्न प्रकार की बातें उससे पूछने लगी। सुनील भी उसकी प्रत्येक बात का उत्तर देने लगा।

किशोर कोट की जेबों में दोनों हाथ डाले हुए धीरे-धीरे बगीचे में टहल रहा था। टहलते-टहलते जब उसने सुनील और सुनीता को देखा तब आगे बढ़ आया और उसकी आकृति पर चिन्ता की जो रेखायें उदित हो आई थीं, उन्हें किसी प्रकार दूर करके मुख पर मुस्कराहट का भाव ले आया। अन्त में प्रसन्नता व्यंजक हँसी हँसता हुआ समीप आकर सुनील की ओर लक्ष्य करके वह बोला—यहाँ हैं आप लोग? इधर मैं सारे घर में आप लोगों को खोज आया। आज फिर मैं एक बार भैया की खोज में निकलने वाला हूँ। सोचता हूँ कि जहाँ-जहाँ भैया के मित्र हैं, वहाँ-वहाँ एक बार खोजकर मैं देख आऊं।

सुनीता संदेहपूर्ण दृष्टि से किशोर की ओर ताकती हुई चुपचाप रह गई। सुनील भी संदेह से आकुल होकर जरा देर तक तो कुछ सोचता रहा, बाद को उसने कहा—आपका यह विचार बहुत उत्तम है। मैं भी आपके साथ चलूंगा।

"नहीं, नहीं, मैं कई जगह जाऊँगा। इससे मेरे साथ चलने में आपको बड़ा क्लेश होगा। इसके सिवा एक ही दिशा में दो आदमियों

को जाने से कोई लाभ भी न होगा।"

गम्भीरभाव से सुनील ने कहा—यह भी ठीक है। परन्तु उसके मन में यही बात आई कि किशोर की इस यात्रा का घोड़े की चोरी से घनिष्ट सम्बन्ध है, भाई को खोजने का तो यह बहाना भर कर रहा है।

तीनों आदमियों ने बगीचे से लौटकर देखा तो चन्द्रगुप्त जांच के लिए आए हुए पुलिस के दारोगा तथा खुफिया-विभाग के एक बहुत ही नामी कर्मचारी से बातें कर रहे थे। पुत्र का पता लगाने के लिए खुफिया-विभाग के इस कर्मचारी को स्वयं चन्द्रगुप्त ने ही बम्बई से बुलाया था।

१२

सुनील को किशोर तथा उसकी माता अन्नपूर्णा पर तो पहले से ही सन्देह था किन्तु पुलिस के आने पर उन माता-पुत्र की आकृति पर जो व्यग्रता का भाव परिलक्षित हुआ, उससे उसका सन्देह और भी दृढ़ हुआ। अब उसे एक प्रकार से पक्का विश्वास हो गया कि इन माता-पुत्र के षड्यन्त्र से ही चित्रगुप्त इस प्रकार अदृश्य हुआ है। सुनील के मन में यह बात आई कि अब अधिक जाँच पड़ताल करने के बाद पत्नी और पुत्र के दुष्कर्म का प्रमाण चन्द्रगुप्त के सामने उपस्थित करने का अर्थ होगा उनके हृदय पर एक दूसरा आघात पहुँचाना। इसलिए मुझे अब इस विषय में निश्चेष्ट हो जाना चाहिए। परन्तु बाद को उसके मन में आया कि मामले को जब पुलिस ने हाथ में ले लिया है तब रहस्य का उद्घाटन हुए बिना रह न सकेगा और उस अवस्था में इनका पारिवारिक विच्छेद होना अनिवार्य है। परन्तु मैं यदि किसी प्रकार पहले से ही वास्तविकता का पता लगाने में समर्थ हो सकूँ तो सम्भव है कि मामले को सँभालने का भी कोई उपाय निकाला जा सके। इसलिए सुनील ने कार्य्य में संलग्न रहने का निश्चय किया। इस विषय में उसने चन्द्रगुप्त की अनुमति भी ले ली।

कुंजियों का एक बहुत बड़ा गुच्छा देकर चन्द्रगुप्त ने सुनील से कहा—बेटा, इन कुंजियों से तुम सभी दरवाजे, आलमारियाँ और ड्रार खोल सकते हो। तुम्हें किसी भी विषय में संकोच न करना चाहिए। घर में चित्रगुप्त को जितने भी अधिकार प्राप्त थे, वे सब अधिकार मैं तुम्हें भी दे रहा हूँ।

गृह-स्वामी की अनुमति प्राप्त कर लेने के बाद सुनील सारे घर में चंचल-भाव से घूमने लगा। एक कमरे का भिड़ा हुआ दरवाजा एकाएक ठेलकर उसने देखा तो अन्नपूर्णा कौशल्या नामक नौकरानी से भयभीत सी होकर फिस-फिस करके कुछ बातें कर रही थी। सुनील को देखते ही वे दोनों दूर-दूर हो गईं। इधर रामू नामक नौकर भी आज कुछ व्यग्र-सा होकर किसी न किसी बहाने से सुनील के पीछे-पीछे लगा रहने का प्रयत्न कर रहा था। उसके इस आचरण से सुनील के हृदय में एक साथ ही क्रोध और हँसी का उद्रेक हुआ। इसके सिवा वह यह भी अनुभव करने लगा कि मेरा उद्देश्य सफल होकर ही रहेगा।

महल की सीढ़ियाँ बहुत-सी थीं। कोई-कोई सीढ़ियाँ घुमावदार थीं, कोई एकदम खड़ी थीं, कोई अन्धकारपूर्ण थीं और कोई चोर-कोठरी से होकर नीचे की ओर गई थीं। किसी-किसी सीढ़ी के ऊपर जो ढक्कन-दार दरवाजे लगे हुए थे वे जान पड़ते थे कि मानो ये साक्षात् राक्षस हैं, शिकार को उदरस्थ कर लेने के विचार से मुंह बाये और होंठ फैलाये पड़े हैं। लोहे के एक सँकड़े से छूटते ही इन दरवाजों के दोनों पल्ले धड़ाम से आकर सीढ़ी का मुँह बन्द कर लेंगे।

सुनील उन्हीं सब सीढ़ियों से कभी नीचे से ऊपर और कभी ऊपर से नीचे आने-जाने लगा। यद्यपि उसे आशंका हो रही थी कि अन्धकार में पाकर कोई मेरे ऊपर भी सांघातिक प्रहार न कर बैठे।

रहस्य का उद्घाटन करने के लिए उस समय सुनील इतनी तन्मयता के साथ कार्य्य कर रहा था कि आहार-निद्रा की इच्छा तो एक प्रकार से उसके हृदय से निकल ही चुकी थी, साथ ही प्राण का भी मोह उसने बहुत कुछ छोड़ दिया था। सुनील ने निश्चय किया कि रात्रि में चित्रगुप्त के कमरे में रक्खी हुई वह सन्दूक खोलकर देखूँगा कि उसमें क्या रक्खा हुआ है?

भोजन-आदि से निवृत्त होने पर घर के सभी लोगों ने जब अपने-अपने सोने के कमरे में आश्रय ग्रहण किया तब सुनील अपना कार्य्य

आरम्भ करने के लिए उद्यत हुआ। उधर चित्रगुप्त का पता लगाने के लिए खुफिया-विभाग का जो कर्मचारी नियुक्त था, वह भी उसी समय कभी किसी उपयुक्त स्थान पर छिपकर और कभी दबे-पाँव से टहल-टहलकर घर के लोगों का भेद-भाव लेने का प्रयत्न कर रहा था। एका-एक सुनील का और उसका सामना हो गया। उक्त कर्मचारी को घर के भीतर सन्देहजनक रूप से इधर-उधर घूमते देखकर सुनील तेजी से उसकी ओर झपटा और अपने बाहुओं में उसे आवेष्टित करके बहुत धीमी आवाज से पूछने लगा—तुम कौन हो ?

सुनील ने देखा कि यह आदमी वैसे तो है नाटा-सा ही, परन्तु है बलवान्। एक झटके में ही उसने सुनील की बाहुओं के पाश से अपने आपको छुड़ा लिया और निमिष-मात्र में एक पिस्तौल सीधी करके उसके सामने खड़ा हो गया। उसने भी उसी प्रकार धीमे स्वर से पूछा—पहले मैं यह जानना चाहूँगा कि तुम कौन हो !

"मैं इस घर का एक अतिथि हूँ। इन लोगों से मेरा सौहार्द है। परन्तु तुमको क्या अधिकार है यहाँ इस प्रकार छिपकर रहने और चलने-फिरने का ?"

"ओह; अब मैं आपको पहचान सका हूं। आप सुनील हैं चित्रगुप्त के मित्र। अपना परिचय भी आपसे प्रकट कर देने में कोई हानि नहीं है, क्योंकि उद्देश्य हम दोनों का एक ही है और हम दोनों ही एक दूसरे के सहायक हो सकते हैं। खुफिया-विभाग का मैं एक कर्मचारी हूँ। मुझे लोग खांडेकर कहते हैं।

परस्पर परिचय हो जाने के बाद सुनील और खांडेकर में बहुत-सी बातें हुईं। इस विषय पर वे दोनों ही सहमत थे कि किशोर और अन्नपूर्णा के षड्यन्त्र से ही चित्रगुप्त अदृश्य हुआ है और घोड़े की चोरी में भी यदि अन्नपूर्णा का नहीं तो किशोर का हाथ अवश्य है। उन लोगों ने यह भी निश्चिय कर लिया कि रामू और कौशल्या इन माता पुत्र के षड्यन्त्र में मुख्य रूप से सहायक हैं।

अब सुनील और खांडेकर ने तिमंजिले के गुप्त रास्ते से होकर चित्रगुप्त के पढ़ने वाले कमरे में जाने का निश्चय किया। टार्च के उजाले में उस गुप्त दरवाजे की साँकड़ आदि बड़ी कठिनाई से खोलकर उसे खोला और दोनों व्यक्तियों ने भीतर प्रवेश करके दरवाजे को बन्द कर दिया। अब टार्च हाथ में लिए हुए रास्ता देखते-देखते वे लोग आगे बढ़े।

उस ओर एक कतार में बने हुए कई कमरे देखकर खांडेकर ने कहा कि ये कमरे इस प्रकार उपेक्षित-भाव से पड़े हैं कि इनमें मनुष्य का आना-जाना प्रायः नहीं होता है। इसलिए इन सबको खूब सावधानी से खोजकर देखना होगा, क्योंकि गोपनीय सामग्रियों को इनमें छिपा रखना अधिक सुविधाजनक है। इस निश्चय के अनुसार चित्रगुप्त के कमरे के पास के चार कमरों को गुच्छे की कुंजियों की सहायता से खोलकर उन दोनों ने देखा। उन सबमें घर की फालतू चीजें रक्खी हुई थीं, कोई महत्त्व की वस्तु नहीं थी। परन्तु पाँचवें कमरे को जब उन्होंने खोलकर देखा तब वह बहुत कुछ साफ-सुथरा था। एक ओर भूमि पर एक विस्तर लगा हुआ था, उससे जरा-सा हटकर एक लालटेन रक्खी हुई थी, शीशे का एक गिलास था और अंग्रेजी का एक समाचार-पत्र भी पड़ा हुआ था।

खांडेकर ने टार्च का प्रकाश डालकर बिस्तरे को खूब ध्यान से देखा। बाद को उसने सुनील से कहा—इस बिस्तरे पर अभी-अभी कोई लेटा हुआ था.........लेटने वाले दो आदमी थे। तकिया पर पास ही पास दो मस्तकों के दबाव का चिन्ह बना हुआ है।......एक पुरुष था और एक स्त्री। एक बगल कुछ ऐसे बाल टूटकर पड़े हैं जो कि छोटे-छोटे और छँटे हुए हैं और एक बगल लम्बे-लम्बे बाल गिरे हैं। इसके सिवा बालों में लगाने का लोहे का एक काँटा भी पड़ा हुआ है।

कमरे के चारों ओर टार्च का प्रकाश फेंक-फेंककर खांडेकर ने जले हुए सिररेट का एक नन्हा-सा टुकड़ा उठा लिया और टार्च के बिलकुल

सामने करके वह उसे देखने लगा। बाद को उसने कहा—पुरुष सिगरेट पीता है......पान भी वह अधिक खाता है। सिगरेट के सिरे पर पान की गाढ़ी पीक लगी हुई है।......उसका एक दाँत टूटा हुआ है। सिगरेट में एक ओर तो पूरे-पूरे दाँत के दबाव का चिन्ह बना हुआ है, दूसरी ओर के चिन्ह से जान पड़ता है कि उस ओर का दाँत कुछ छोटा है; परन्तु बीच में किसी प्रकार का चिन्ह ही नहीं है। इससे स्पष्ट है कि वहाँ दाँत का दबाव नहीं पड़ सका है।

आग्रहपूर्ण स्वर में सुनील बोल उठा—तब तो यह किशोर ही है। यहाँ सिगरेट पीने वाला तथा मुँह में सदा पान का बीड़ा भरे रहनेवाला वही है। किशोर का एक दाँत भी तिर्छा होकर कुछ टूट गया है।

समाचार-पत्र के नीचे से खांडेकर ने एक रूमाल निकाली, जिसके एक कोने में रेशम के सूत से अँग्रेजी का 'वी' अक्षर बना हुआ था। यह देखकर सुनील बोल उठा कि इस कमरे में निस्सन्देह किशोर ही था। परन्तु उसके पास लेटने वाली स्त्री कौन थी ?

बिस्तरे पर जो लम्बे-लम्बे बाल और बालों में बाँधने का काँटा मिला था। उसे कागज के एक टुकड़े में लपेटकर जेब में रखते-रखते खाँडेकर ने कहा—यही तो एक समस्या है। वह सौभाग्यशालिनी कहीं कौशल्या ही तो नहीं थी ? दिन में इन बालों और काँटे को उसके बालों और काँटे से मिलाकर देखने का प्रयत्न करूँगा।

उस कमरे से निकलकर वे दोनों आदमी उसके बगल वाले कमरे में गये। वह कमरा नहाने का था। उसके बाद पाखाना था। पाखाने के पास से ही नीचे की ओर एक जीना चला गया था; शायद वह मेहतर के आने-जाने के लिए बनाया गया था। इस स्नान-गृह और शौचालय के सामने वाले कमरे भी खाली ही पड़े थे। इन सब को देखने के बाद वे लोग लौटकर चित्रगुप्त के कमरे के सामने आ गये। तब खांडेकर ने कहा कि ये दो कमरे देख लेना ही आज काफी होगा।

चित्रगुप्त के सोने के कमरे में ऐसी कोई वस्तु देखने में नहीं आ

जो अनिष्ट का कारण समझी जा सके । अब चित्रगुप्त का पढ़ने का कमरा खोला गया। उस कमरे में प्रवेश करने पर सुनील ने कहा कि सबसे पहले इस टेबिल के नीचे का बड़ा-सा सन्दूक ही खोल कर देखना चाहिए। इससे दरवाजा भिड़ाकर उन दोनों आदमियों ने बड़े परिश्रम से उसे टेबिल के नीचे से निकाला।

सन्दूक की ओर मुँह करके जरा-सा ध्यानपूर्वक देखते ही उसमें से सड़े हुए शव की-सी गन्ध आने लगी। सुनील के पास कुंजियों का जो गुच्छा था उसमें से कोई भी कुंजी उस सन्दूक के ताले में न लग सकी। तब बड़े प्रयत्न से खांडेकर ने उस सन्दूक को तोड़ा। एक ओर की चदर तोड़कर जैसे ही हटाई गई वैसे ही कम्बल से ढँकी हुई चीज के ऊपर डाली हुई एक साड़ी दिखाई पड़ी। तब सुनील के मन में आया—मैं जो सोच रहा था, बात वही है। यह साड़ी किशोर की माँ की है।

खांडेकर ने कहा—साड़ी में रक्त लगा हुआ है।

यह बात सुनते ही सुनील व्यग्रभाव से बोल उठा—साड़ी के नीचे क्या है, जरा देखिए तो! इस साड़ी के नीचे क्या है ?

खांडेकर ने साड़ी धीरे से उठा ली। उसे उठाते ही उसके नीचे से निकला एक ब्लाउज़।

सावाधानी के साथ साड़ी और ब्लाउज उठाकर एक कुर्सी पर रखने के बाद खांडेकर धीरे-धीरे खींचकर कम्बल हटाने लगा।

कम्बल जैसे-जैसे उठता जाता, वैसे ही वैसे सुनील का आतंक भी बढ़ता जा रहा था। उसे ऐसा लग रहा था कि चक्कर खाकर मैं अभी ही गिरना चाहता हूँ। अभी-अभी रक्त से भीगा हुआ मेरे साथी का क्षत-विक्षत शरीर निकल आयेगा। उसे मैं किस तरह अपनी आँखों से देख सकूँगा ?

खांडेकर के कम्बल हटाकर फेंकते ही एक स्त्री का शव निकल आया। यह देखते ही वे दोनों भय और विस्मय से अभिभूत हो उठे। सुनील ने तो आँखें ही मूंद लीं।

मुंह पर से कम्बल का आवरण हटते ही खांडेकर ने टार्च का प्रकाश फेंककर उस शव को देखा और कहा—यह शव तो किसी स्त्री का है।

सुनील इतने समय तक साँस बन्द किये हुए स्तम्भित होकर खड़ा था। खांडेकर की बात सुनकर उसने शांति की साँस ली। आँख खोलकर उसने देखा। जिस स्त्री का वह शव था वह किसी अच्छे घराने की मालूम पड़ रही थी। उसके वस्त्र आदि मूल्यवान् थे।

सुनील ने आज ही सुनीता से लता का हाल सुना था। इससे उसे सन्देह हुआ कि यह स्त्री सम्भवतः लता ही है। परन्तु उसकी हत्या किसने की? तो क्या चित्रगुप्त उसकी हत्या करके फरार हुआ है? परन्तु लता के सम्बन्ध में तो सुनने में यह आया था कि वह किशोर के साथ यहाँ से गई थी। तो क्या किशोर ही उसकी मृत्यु का कारण है? परन्तु किशोर भला उसकी हत्या क्यों करेगा?

कुछ निर्णय करने में असमर्थ होकर सुनील इस विषय में खाँडेकर का मत जानने के लिए उत्सुक हो उठा। इतने में किसी के पैरों की आहट पाकर खाँडेकर ने चुपके से सुनील से कहा कि टार्च बुझाकर अब यहाँ से हट चलना चाहिए। चलो, आस-पास के किसी अन्धकारमय कमरे में चलकर छिप रहें।

दोनों ही आदमी उस कमरे से दबे-पाँव निकल पड़े। एक दूसरे कमरे में जाकर वे लोग छिप गये। उस अन्धकारमय कमरे से झाँककर उन्होंने देखा कि एक पतली और लम्बी-सी स्त्री अपने शरीर को लचकाती हुई महामहिमा-सम्पन्न रानी के समान धीर गति से पैर बढ़ाती हुई इसी ओर बढ़ी आ रही है।

स्त्री सीधे चित्रगुप्त के पढ़ने वाले कमरे की ओर गई। द्वार खोलकर कमरे में उसने प्रवेश किया। अब सुनील और खाँडेकर ने उत्कण्ठित-भाव से उसकी ओर कान लगाया। वे दोनों सोच रहे थे कि यह स्त्री कमरे में प्रवेश करके जब देखेगी कि यहाँ जो भयंकर पापकर्म किया गया था, उसका वीभत्स दृश्य उद्घाटित हो गया है, तब वह भय के

मारे चिल्ला उठेगी और यदि न भी चिल्ला उठेगी तो किसी न किसी प्रकार से तो अपना विस्मय प्रकट करेगी ही।

काफी देर तक पूर्ण निस्तब्धता थी। कमरे से किसी प्रकार की भी आहट न आई। इधर प्रतीक्षा का यह समय सुनील और खाँडेकर के लिए अत्यन्त ही असह्य होता जा रहा था।

स्त्री जैसे आई थी, वैसे ही चित्रगुप्त के कमरे से निकल पडी। मुँह से किसी प्रकार का शब्द निकाले बिना ही वह वहाँ से चली गई। दबे-पाँव गली में आकर खाँडेकर और सुनील उसे देखते रहे, परन्तु दूध के समान शुभ्र वस्त्र से आच्छादित उसका विशाल शरीर गली में प्रवेश करने वाले द्वार के उस पार जाते ही इन दोनों के लिए अदृश्य हो गया; क्योंकि स्त्री ने कपाट बन्द कर दिया था।

स्त्री के चले जाने पर सुनील के मन में यह बात आई कि कल भी मैंने इसी रमणी-मूर्ति को चित्रगुप्त के कमरे की खिड़की के सामने खड़ी देखा था।

अन्धकार में छिपे रहकर वे दोनों आदमी इस ताक में थे कि देखें यह स्त्री लौटकर फिर आती है या नहीं। इस प्रकार छिपे-छिपे उन दोनों आदमियों ने बहुत-सा समय व्यतीत कर दिया। तो भी गली के प्रवेश-द्वार में लगे हुए उस भारी-भरकम कपाट के खुलने की किसी प्रकार की आहट न मिली। तब खाँडेकर ने कहा—चलो, जरा देखें तो कि वह स्त्री कमरे में जाकर क्या कर गई है?

खाँडेकर तथा सुनील ने चित्रगुप्त के कमरे में फिर प्रवेश किया। दरवाजा भिड़ाकर जब उन्होंने टार्च का प्रकाश किया तब उन्हें मालूम हुआ कि जो चीज हम लोग जहां जिस रूप में छोड़ गये थे, वह वहीं वैसी की वैसी पड़ी है। स्त्री ने कमरे में आकर किसी चीज से हाथ तक नहीं लगाया। यह देखकर खाँडेकर ने कहा —अभी-अभी जिनका शुभागमन हुआ था वे हमारी शुभचिन्तिका बहुत ही विज्ञ हैं! कमरे में आकर जैसे ही उन्होंने देखा कि दुष्कर्म का भण्डाफोड़ हो गया है, वैसे ही कोई

चीज जरा भी इधर-उधर न करके वे चुपचाप खिसक पड़ी हैं। अब सनाख्त करना होगा कि वे थीं कौन ? परन्तु इस समय कोलाहल करके लोगों की निद्रा भंग करने से तो कोई लाभ होगा नहीं, सवेरा होने पर ही जो कुछ होगा वह किया जायगा। तब तक हमें समस्त वस्तुओं की एक सूची तैयार कर लेनी है, साथ ही उनमें से हर एक का वर्णन भी लिख लेना है। मैं अपने नोटबुक में झटपट लिखे लेता हूँ। उसे पढ़कर साक्षी के रूप में आप हस्ताक्षर कर दीजिए। बाद को समस्त वस्तुएँ पहले की ही तरह सन्दूक में बन्द करके मैं लाह से उस पर मुहर कर दूंगा। सवेरे पुलिस बुलाकर उसकी उपस्थिति में इसकी जांच की जायगी। तब इस बात का पता लगाया जायगा कि यह शव किसका है और इसकी हत्या किसने की है ?

हत्याकारी कौन हो सकता है, इस बात की ओर ध्यान जाते ही सुनील का हृदय कांप उठा।

१३

सबेरा होने पर चन्द्रगुप्त चिन्तित भाव से जाकर अपने बैठने के कमरे में उपस्थित हुए। उनकी आकृति से स्पष्ट रूप से मालूम पड़ रहा था कि रात्रि इनकी बहुत ही व्यग्रतापूर्वक व्यतीत हुई है। टेबिल पर झुककर दोनों हाथों के सहारे माथा सँभाले हुए वे बैठे ही थे कि सुनील और खांडेकर जाकर पहुंच गये।

रात्रि में खांडेकर से सुनील की जिस प्रकार एकाएक मुलाकात हुई थी और वे दोनों जिस प्रकार परस्पर सहयोग के साथ चित्रगुप्त के कमरे को खोलकर देखने के लिए गये थे और अन्त में जिस प्रकार वे एक अद्भुत वस्तु का अविष्कार करने में समर्थ हुए थे, यह समस्त वृत्तान्त सुनील उन्हें बतला गया।

सुनील की यह बातें सुनते ही चन्द्रगुप्त कुर्सी ठेलकर खड़े हो गये। कमरे से निकलकर उद्विग्नभाव से चलते-चलते उन्होंने कहा—चलो, मुझे बतलाओ कि तुमने किस अद्भुत रहस्य का अविष्कार किया है। मुझसे कुछ छिपाओ मत।

सुनील जिस समय चन्द्रगुप्त से वह वृत्तान्त बतला रहा था उस समय अन्नपूर्णा कुछ आड़ में होकर फूलदानी में फूल रख रही थीं और खांडेकर के साथ में चन्द्रगुप्त जब चित्रगुप्त के कमरे की ओर जाने लगे तब वे भी उतावली के साथ उसी ओर बढ़ीं।

चित्रगुप्त के कमरे में पहुँचते ही सुनील ने सन्दूक खोल दी। उसने कहा—ताऊ जी, देखिए। यही अविष्कार किया है हम लोगों ने।

खांडेकर ने कहा—सन्दूक में भरकर आदमी की लाश रक्खे हुए हैं आप घर में! पुलिस के सामने क्या सफाई देंगे इसके लिए?

झुककर देखते ही चन्द्रगुप्त ने कहा—किसी स्त्री की है यह लाश !

लाश एक स्त्री की है, यह जानकर हृदय में जो आशंका लिये हुए वे यहाँ आए, वह दूर हो गई। इस कारण उनके मुख-मण्डल पर एक सन्तोष-मिश्रित विस्मय का भाव उदित हो आया।

चन्द्रगुप्त की बात दोहराती हुई अन्नपूर्णा बोलीं—स्त्री की लाश है, कौन है वह स्त्री ?

आगे बढ़कर शव को देखते ही उसके हृदय में उत्पन्न हो आया भय का भाव। उस भाव को छिपाने के लिए प्रयत्नशील होने पर भी अन्नपूर्णा चिल्ला उठीं—यह तो लता है !

गृह-स्वामिनी की चीत्कार सुनकर नौकर-चाकर भी उत्कण्ठित भाव से दौड़ पड़े। उन सब के पीछे-पीछे आया किशोर। चेहरा उसका फक हो गया था उस समय।

नौकरों की भीड़ ठेलकर कमरे में प्रवेश करते-करते किशोर ने पूछा—क्या हुआ है बाबू जी ?

चन्द्रगुप्त ने गम्भीर स्वर से कहा—देखो आकर जो कुछ हुआ है।

सन्दूक में रक्खे हुए शव की ओर झाँककर किशोर बहुत ही मन्द और स्पष्ट स्वर में बोल उठा—आश्चर्य है ! लता यहाँ आई कैसे ?

किशोर के मनोभाव की परीक्षा के लिए सुनील ने उससे कहा—लता को सेवा-सदन छोड़ आने के लिए तो आप ही गये थे न !

क्रोध और भय के कारण किशोर का मुँह काला हो गया। विशेषतः सुनील के ऊपर उसकी हड्डी-हड्डी जल उठी यह सोचकर कि मेरे संबंध की रत्ती-रत्ती बात एक बिराना आदमी होकर क्यों खोजता रहता है यह ? मेरी घरेलू बातों से इसका क्या मतलब ?

इस विषय में किशोर का मौन-भाव सुनील और खांडेकर के सन्देह को और भी घनीभूत किये दे रहा था। किन्तु अन्नपूर्णा उसकी ओर से सफ़ाई देती हुई उतावली के साथ बोल उठीं—किशोर तो उसे महीना भर पहले ले गया था।

"परन्तु इसका प्रमाण क्या है कि वे उसे सेवा-सदन तक पहुँचा आये थे ?"

कुछ उत्तेजित कण्ठ से अन्नपूर्णा ने कहा—सौभाग्यवश इसका प्रमाण भी सुरक्षित रख लिया गया है। लता को किशोर ने सेवा-सदन में जब फिर से भर्ती कराया था, वहाँ से उसे रसीद मिली थी। इसके सिवा वहाँ के सुपरिन्टेण्डेण्ट की एक चिट्ठी भी मेरे पास है, जिसके द्वारा मुझे सूचित किया गया है कि बंगाल से लता के एक भाई आये थे और वे उसे ले गये हैं।

अन्नपूर्णा की इस बात के उत्तर में सुनील ने बहुत ही नम्र स्वर में कहा—परन्तु इस घटना से तो यही प्रमाणित होता है कि लता के उन कल्पित भाई का सम्बन्ध इसी घर से है। अब अविष्कार इस बात का करना है कि वे सज्जन हैं कौन ?

सुनील की इस बात का कोई उपयुक्त उत्तर अन्नपूर्णा को न सूझ पड़ा। क्रोध के मारे उसका शरीर थर-थर काँप रहा था उस समय। इधर माता को निरुत्तर देखकर किशोर का मुँह बिलकुल ही सूख गया।

चन्द्रगुप्त ने कहा—इस वीभत्स दृश्य के सामने खड़े-खड़े तर्क-वितर्क करते रहने में कोई लाभ नहीं है। आओ, अब इस कमरे को बन्द कर दें और पुलिस को इसकी सूचना दे दें, बाद को उचित व्यवस्था की जायगी।

चन्द्रगुप्त के इस प्रस्ताव के अनुसार सब लोग कमरे से निकल गये। सुनील ने उसमें ताला लगा दिया।

इतने में कौशल्या नामक नौकरानी तेजी के साथ पैर बढ़ाती हुई आई और व्यवस्तभाव से अन्नपूर्णा से बोली—सुनीता बाई बहुत घबराई हुई हैं। वे आपको बुला रही हैं।

यह बात सुनते ही किशोर उतावली के साथ वहाँ से चला गया।

हत्या के मामले की सूचना मिलने पर पुलिस के आने में बिलम्ब नहीं हुआ। आते ही उसने लाश को सन्दूक से निकलवाया। देखने से मालूम हुआ कि मृतक के वस्त्रों में रक्त लगा है अवश्य किन्तु शरीर पर इसके कहीं चोट का कोई चिह्न तक नहीं है। स्वयं किसी प्रकार का भी अनुमान करने में असमर्थ होकर पुलिल ने लाश को पोस्टमार्टम के लिए बम्बई भेज दिया।

पुलिस जब महल से चली गई, तब खांडेकर ने सुनील से कहा कि भाई, अब मैं भी चलता हूँ। बम्बई में पोस्टमार्टम के द्वारा जब मालूम हो जायगा कि लता की मृत्यु किस प्रकार हुई है तब मैं पूना जाकर सेवा-सदन में पूछ-ताछ करूँगा। वहाँ से मुझे यह मालूम करना है कि लता इस बार कब सेवा-सदन में प्रविष्ट हुई थी, कब वहाँ से वह निकली है और जिस व्यक्ति ने अपने आपको उसके भाई के रूप में परिचित किया था, उसकी रूप-रेखा कैसी है और अवस्था उसकी अनुमानतः कितनी होगी। ये सभी बातें मालूम करके जब तक मैं न आ सकूँ तब तक आप इन लोगों की गति-विधि का अवलोकन करते रहिएगा। आप इस कार्य को बहुत ही उत्तम ढंग से कर लेंगे, इस बात का मुझे विश्वास है। परन्तु जो कुछ देखिएगा, वह नोट कर रखिएगा अवश्य जिससे कि मैं आपके परिश्रम से पूर्णरूप से लाभ उठा सकूँ।

आज सवेरे से ही इस तरह की सनसनी थी कि जलपान आदि की ओर किसी का ध्यान ही नहीं गया। निर्दिष्ट समय से काफी देर के बाद नौकर-नौकरानी जब किसी प्रकार व्यवस्था कर सके, तब घंटी बजाकर जलपान के कमरे में एकत्र होने की सूचना सब लोगों को दी गई।

आज जिस दुर्घटना का आविष्कार हुआ है, उसके प्रभाव से उस घर के निवासियों के समान ही अतिथि तक प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके थे। इसलिए किसी ने उत्साहपूर्वक जलपान नहीं किया। जिसके सामने जो कुछ आया, उसे वह गले के नीचे उतार गया। किसी ने उससे कुछ और लेने के लिए न तो आग्रह किया और न उसने स्वयं इच्छा प्रकट की।

घर के भीतर का वायुमण्डल विषाद के भाव से इतना अधिक व्याप्त था कि वहाँ शान्ति की जरा भी आशा न देखकर चन्द्रगुप्त टहलने के लिए बाहर चले। साथ में उनके सुनीता किशोर और सुनील भी चले।

चन्द्रगुप्त दरवाजे की चौखट के बाहर भी पैर नहीं निकाल पाये थे कि तेजी से दौड़कर आते हुए ताराचन्द को उन्होंने देखा। हाँफते-हाँफते दूर से ही चिल्लाकर उसने कहा—हुजूर, लौट आया है!

ताराचन्द की यह बात सुनते ही चन्द्रगुप्त के हृदय में आशा का उदय हुआ। व्यग्रभाव से चिल्लाकर उन्होंने कहा—कौन लौट आया है?

"राकेट घोड़ा, हुजूर! राकेट घोड़ा।......"

चन्द्रगुप्त के साथ ही साथ सुनीता और सुनील के मन में भी आशा की एक झलक दिखाई पड़ी थी कि ताराचन्द चित्रगुप्त के लौट कर आ जाने की सूचना देने जा रहा है। परन्तु उसके मुँह से राकेट का नाम सुनते ही उन सबका उत्साह भंग हो गया और उसकी बात की ओर किसी का ध्यान न रहा। इधर ताराचन्द अपनी धुन में कहता ही गया—घोड़ा कसा-कसाया बगीचे में टहल रहा था हुजूर! बहुत दूर से शायद दौड़ता हुआ आया है। शरीर पसीने से तर था। यहाँ पहुँच-कर खूब जोर से हिनहिनाने लगा वह, तब मैं आकर उसे पकड़ ले गया। अस्तबल में बँधा है वह।

किशोर बोल उठा—आश्चर्य है!

इस बात के उत्तर में चन्द्रगुप्त ने गम्भीर-भाव से कहा—अब यहाँ सभी कुछ सम्भव है।

वे चुपचाप बगीचे में चले गये।

१५

पोस्टमार्टम से प्रमाणित हुआ कि लता की मृत्यु कारण भ्रूण-हत्या का प्रयत्न किया है और उसके शरीर में जो रक्त लगा हुआ है वह गर्भाशय का रक्त है।

उपर्युक्त निर्णय के साथ ही साथ रहस्य ने एक दूसरा रूप धारण कर लिया। तहकीक़ात से पुलिस इसी निर्णय पर पहुँची कि लता का अनुराग चित्रगुप्त से ही था। गवाहियाँ भी इस आशय की मिल गईं कि फरार होने से दो-चार दिन पहले एक लम्बी-सी रमणी के साथ वन में टहलता हुआ चित्रगुप्त दिखाई पड़ा था। इस प्रकार यह प्रमाणित हो गया कि चित्रगुप्त ही सेवा-सदन से लता को ले आया था; अपना दुष्कर्म छिपाने के लिए उसी ने उसका गर्भपात कराने का प्रयत्न किया और अन्त में जब उसकी मृत्यु हो गई तब लोक-लज्जा तथा पुलिस से आत्म-रक्षा करने के लिए वह भाग निकला।

पुलिस के इस निर्णय के कारण किशोर उत्साहित हो उठा। उसके चरित्र के सम्बन्ध में पिता तथा सुनीता को जो सन्देह था; उसके लिए एक बार खूब कसकर उन्हें ताना देने में भी आनाकानी नहीं की। परन्तु अन्नपूर्णा के मुख की गम्भीरता और भी बढ़ गई। उनकी दृष्टि प्रखर और कठोर हो उठी।

सुनीता को एकान्त में देखते ही सुनील ने आग्रहपूर्वक पूछा—क्या पुलिस का यह निर्णय आपको विश्वासजनक मालूम पड़ रहा है।

"बिलकुल नहीं।"

सुनीता ने यह बात कही तो अवश्य किन्तु उसके कण्ठ-स्वर में कुछ वैसा दृढ़ता का भाव नहीं दिखाई पड़ा। इससे सुनील ने निश्चय किया

कि चित्रगुप्त के निर्दोष होने के सम्बन्ध में कदाचित् इन्हें भी कुछ सन्देह है। परन्तु स्वयं उसका मन किसी प्रकार भी गवाही नहीं देता था कि चित्रगुप्त इस प्रकार के नीचतापूर्ण कार्य की ओर प्रवृत्त हो सकेगा, यद्यपि यह बात दूसरों से कहने के अनुकूल उसके पास कोई प्रमाण नहीं था। इधर इसके प्रतिकूल प्रमाणों की भरमार थी। इसलिए भविष्य में आने वाले किसी शुभ अवसर की प्रतीक्षा में ही बैठा रहना श्रेयस्कर समझा।

खांडेकर लौटकर आ गया। उसने कोई ऐसी नई बात नहीं बतलाई जो सुनील को न मालूम रही हो। उसने कहा—इस मकान में जो पतली-सी गली है, उसके अन्त में एक गुम्ज है। उसके पास ही एक ढक्कनदार दरवाजा लगा हुआ है। उस दरवाजे के नीचे अँधेरे में एक घुमावदार सीढ़ी है। उस सीढ़ी से आदमी अनायास ही गुप्तरूप से घर के भीतर प्रवेश कर सकता है। यह बात ताम्बे-जैसे पुराने नौकर को मालूम होनी चाहिए, यद्यपि वह पुलिस के सामने इस विषय में केवल आश्चर्य प्रकट करने के अतिरिक्त कुछ कह नहीं सका।

उपर्युक्त गली के आस पास के कमरों को एक बार फिर से देखने का उन दोनों ने निश्चय किया और उपयुक्त अवसर देखकर नंगे पैर बहुत धीरे-धीरे चलकर वे उस कमरे के पास पहुँचे, जिसमें भूमि पर लगी हुई शैय्या आदि वे देख आये थे। कमरे के द्वार के पास पहुँचते ही खांडेकर एकाएक खड़ा हो गया और उसने संकेत से सुनील को भी आगे बढ़ने से रोक दिया। कान लगाकर जरा देर तक खड़ा रहने के बाद, एकाएक वह भीतर घुस पड़ा। सुनील ने भी उसका अनुसरण किया।

उस कमरे में थी कौशल्या नामक नौकरानी। एक बाल्टी में आग धधकाये हुए वह एक रेशमी साड़ी जला रही थी। आधी साड़ी तो जल गई थी और आधी बाल्टी के बाहर झूल रही थी। साड़ी जैसे-जैसे जलती जाती वैसे ही वैसे कौशल्या उसे बढ़ाती जाती। इसी उद्देश्य से

वह साड़ी का वह अंश पकड़े हुए थी जो अभी जलने को बाकी था।

चील की तरह झपट्टा मारकर खांडेकर ने जलती हुई साड़ी को आग से निकाल लिया और उसके जलते हुए छोर को हाथ मलकर उसने बुझा दिया। बाद को कौशल्या के भय से विह्वल हो उठे मुख की ओर ताककर उसने पूछा—यह साड़ी किसकी है?

कौशल्या ने अपने सूखे हुये कंठ से किसी प्रकार यह वाक्य निकाला—मेरी है, हुजूर!

"तुम्हारी है? इस तरह की कीमती रेशमी साड़ी तुम पहनती हो?"

"मालकिन ने मुझे बखशीश में दी थी यह।"

"परन्तु यह साड़ी तुम जला क्यों रही हो?"

"पुरानी हो गई है। बहुत दिन पहन चुकी हूँ इसे।"

"पुरानी-जैसी तो अभी यह नहीं मालूम पड़ती! तुम जब इतनी हिम्मत रखती हो कि रेशमी साड़ी आग पर रख दो तब इस तरह दूसरे की दासी बनकर क्यों रहती हो?"

खांडेकर की इस बात के कारण कौशल्या पहले तो निरुत्तर हो गई, किन्तु उसके बाद ही अपनी बुद्धि-कौशल दिखाये बिना वह न रह सकी। उसने कहा—मैं दासी कार्य करती हूँ अवश्य, किन्तु एक बहुत बड़े दानी और धनवान् के यहाँ की दासी हूँ मैं। किसी ऐरे-गैरे की दासी नहीं हूं।

कौशल्या की बुद्धि के सामने पराजित होकर खांडेकर सुखी भी हुआ और साथ ही उसने कुछ दुःख का भी अनुभव किया। अब उसे स्पष्ट रूप से मालूम हो गया कि कौशल्या से रहस्य मालूम कर लेना मैंने जितना आसान काम समझ रक्खा था उतना वह है नहीं। इसलिए उसने अपना कंठ-स्वर बदल दिया। उसने कहा—बुरा न मानना, मेरे मन में तुम्हारे प्रति कोई संदेह का भाव नहीं है। परन्तु तुम्हें शायद यह मालूम भी हो गया होगा कि महल में इधर जो दुर्घटनायें हुई हैं, उनके

सम्बन्ध में आवश्यक जाँच-पड़ताल करने के लिए मैं आया हूँ। इससे मुझे सभी प्रकार की बातों का पता लगाना पड़ता है। पुलिस आ रही है इन कमरों की तलाशी लेकर इनमें ताला लगाकर मुहर कर देने के लिए। इसीलिए मैंने इन्हें पहले से एक बार देख लेना आवश्यक समझा। परन्तु तुम यदि इस रूप में पुलिस की निगाह में पड़ गईं तो ठीक न होगा। इसलिए जितनी शीघ्रता से हो सके, तुम यहाँ से खिसक जाओ, यह साड़ी तुम्हारी ओर से मैं जलाये देता हूँ।

खांडेकर साड़ी के टुकड़े को बाल्टी में जलती हुई आग में फेंकने को उद्यत हुआ, मानो अब उसके सम्बन्ध में उसे किसी प्रकार का कौतूहल रह ही नहीं गया था। इधर पुलिस का नाम सुनते ही कौशल्या भयभीत होकर वहाँ से चल खड़ी हुई। खांडेकर की भाव-भंगी से उसे विश्वास हो गया कि साड़ी अब जला ही दी जाएगी। इधर कमरे से उसके निकलते ही खांडेकर ने संकेत से सुनील को द्वार बन्दकर लेने का आदेश किया। बाद को साड़ी के टुकड़े को उसने झाड़कर तहाया और उसे एक कागज में लपेटकर रख लिया। उसके बाद कौशल्या ने साड़ी को जलाने के लिए जो कुछ रद्दी कागज वहाँ रख छोड़ा था, वह सब बाल्टी में रखकर उसने उसमें दियासलाई लगा दी।

कमरे से निकलकर जाते-जाते खांडेकर बोला—देखो सुनील कौशल्या अभी फिर लौटकर आवेगी। आने पर वह यह भली भाँति समझ लेगी कि साड़ी जला दी गई है। परन्तु यह साड़ी अवश्य लता की ही है। कौशल्या के पास और भी चीजें होंगी। जब यह भोजन के लिए जाय तब उसके कमरे की तलाशी होनी चाहिए। आप जरा उस ओर ध्यान रखिए और कौशल्या इस कमरे की ओर यदि आये तो कुछ समय तक उसे बातों में भिड़ा रखिए।

१६

महल के बगीचे में एक किशोरी बालिका अपने अंचल में कुन्द के फूल उतार रही थी। अवस्था उसकी पन्द्रह वर्ष की रही होगी। भौंरे के समान उसकी काली आँखें थीं। दृष्टि उसकी निर्भीकता की व्यंजक थी। मुख उसका अधखिले गुलाब के समान कोमल, मनोरम और भाव-व्यंजक था। होंठ उसके मानों उसकी मानसिक दृढ़ता के दर्पण थे। किशोरी के उभड़े हुए उरोज और उसकी क्षीण कटि इस बात की साक्षी दे रहे थे कि यौवन ने नियमित समय से पहले ही इसके ऊपर अधिकार करने का उद्योग किया है। वह किशोरी गणपति बाजीपुरकर की कन्या थी, नाम था उसका साधना छुटपन में चित्रगुप्त ने प्यार करके उसका नाम रख दिया था कुसुम इसलिए पिता के रक्खे हुए नाम की अपेक्षा पिता के स्वामी के पुत्र का ही रक्खा हुआ नाम वह अधिक पसंद करती थी। जान पहचान के लोगों में कुसुम के ही नाम से वह पुकारी भी जाती थी।

छुटपन में चित्रगुप्त साधना को कंधे पर बैठालकर बगीचे भर में दौड़ा करता, उसे प्यार करता, उसे तितलियाँ पकड़ कर देने का लोभ दिखाकर बगीचे के एक छोर से लेकर दूसरे छोर तक दौड़ता। इसके विपरीत किशोर उसे बराबर चिढ़ाता रहता, समय-समय पर डाटकर रुला देने में भी वह संकोच न करता। परन्तु वयोवृद्धि के साथ ही साथ कुसुम यह अनुभव करती जा रही थी कि चित्रगुप्त की अपेक्षा किशोर के ही प्रति मेरे हृदय में अधिक अनुराग है, अधिक श्रद्धा का भाव है। चित्रगुप्त से वह एक साथी की तरह खुलकर मिला करती; किन्तु किशोर के समीप वह इस प्रकार जाती, मानो किसी राजराजेश्वर के समीप उसकी एक तुच्छ दासी जा रही है। उसकी आज्ञाओं का बहुत ही विनयपूर्वक पालन करके वह अपने आपको कृतार्थ समझती

थी। इस प्रकार शैशव काल में किशोर के प्रति कुसुम के हृदय में जो भय-मिश्रित सम्मान का भाव था, वही अब तरुण हो जाने पर प्रेम के रूप में परिणत होता जा रहा था।

कुसुम के सौन्दर्य की ख्याति सर्वत्र फैलती जा रही थी इससे उसे अपनी पुत्र-वधू बनाने की लालसा से पैगाम लगाने के लिए कितने ही माता-पिता तरह-तरह के उपाय सोच रहे थे। उसके हृदय का अपहरण करने की दुराशा हृदय में छिपाये हुए कितने युवक तरह-तरह के बहाने निकालकर महल के इर्द-गिर्द चक्कर लगाया करते थे।

कुसुम का पालन-पोषण उसके पिता के स्वामी चन्द्रगुप्त बाबू के ऐश्वर्य के वायुमंडल में हुआ था चन्द्रगुप्त बाबू जहाँ कहीं भी किसी पद पर नियुक्त होकर गये हैं, वहाँ सर्वत्र ही उनका माली जग्गू परिवार-सहित उनके साथ-साथ गया है। ऐसे वायुमंडल में बड़ी होने के कारण कुसुम की दृष्टि में समस्त पुरुष-समाज दो भागों में बँट गया था। एक भाग में बड़े लोग थे, जैसे चन्द्रगुप्त बाबू चित्रगुप्त और किशोर आदि; दूसरे भाग में थे उससे निम्नकोटि के सब लोग। उसे मन में यह बात लाने तक में भी क्लेश होता था कि दुर्भाग्यवश मेरे पिता जी भी इस दूसरी ही कोटि में हैं और मैं एक छोटे आदमी की कन्या हूं। छोटे आदमियों के प्रति उसे इतनी विरक्ति हो उठी थी कि वह उनसे दूर ही दूर रहा करती थी।

चन्द्रगुप्त बाबू के यहाँ जितने भी आनन्द-उत्सव होते, जितने भी समारोह होते, उन सबसे कुसुम को दूर ही दूर रहना पड़ता। उन सब में योगदान करते समय बड़े आदमियों के बीच में उसे स्थान नहीं मिल पाता था और नौकर-नौकरानियों के बीच में बैठना उसे सह्य नहीं था। इससे वह स्वभावतः सबसे दूर रहकर एकान्त जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य थी। इसके परिणाम-स्वरूप दूसरों से वह उत्तरोत्तर उदासीन होती जा रही थी। इसके सिवा उसके स्वभाव में रूखापन और अहंकार का भी भाव उत्तरोत्तर आता जा रहा था।

कुसुम के अहंकार का एक कारण और था। एक तो लोगों ने उसके सौंदर्य की प्रशंसा बहुत अधिक कर रक्खी थी, दूसरे वह स्वयं भी यह अनुभव किया करती थी कि मेरी जैसी अपार सौंदर्य-राशि इस अचल की किसी और तरुणी के भाग्य में नहीं है। अपनी इस निधि को सुरक्षित रखने के लिए सावधान भी वह खूब रहा करती थी। कभी वहब तंन नहीं मलती थी, हाथ में कभी भाड़ू नहीं उठाती थी। वह सोचती थी कि हाथों की कोमलता में कहीं कमी न आये, मेरी रेशम के समान चमकीली लटों पर कहीं गर्द न पड़ जाय।

कुसुम माता-पिता की अकेली लड़की थी, उनकी आँखों की तारा थी। उसके एक भाई था अवश्य, किन्तु घर में आजकल उसका कोई नाम तक नहीं लेता था। कुल का कलंक था वह। चोरी करके वह सजा काट रहा था। इससे कुसुम अकेली ही माता-पिता के पूर्ण स्नेह की अधिकारिणी थी। पिता उसका शौकीन और धनवान आदमी का माली था। मासिक वेतन के अतिरिक्त समय-समय पर पारितोषिक भी वह उदार भाव से प्राप्त करता रहता, इससे कुसुम के सामने प्रायः किसी प्रकार के अभाव का अनुभव करने का अवसर वह नहीं आने देता था। इससे खूब ठाट-बाट बनाकर वह आलस्य में ही दिन व्यतीत किया करती थी।

कुसुम जब आलस्य का जीवन व्यतीत करते-करते ऊब जाती, तब फूल चुनकर कभी माला गूँथती, कभी फूलों का तोड़ा बनाती और किसी-किसी दिन वह माला और तोड़ा लेकर अन्नपूर्णा मालकिन को उपहार देने जाती। किसी दिन घूमते-घूमते चित्रगुप्त जब उसके स्थान पर आ जाता तब अपनी गूंथी हुई माला उपहार के रूप में मुस्कराती हुई वह उसे ही दे देती। परन्तु मालिकिन अन्नपूर्णा को देने के लिए जाते समय जिस दिन किशोर उसके हाथ से माला छीन लेता था, बगीचे में फूल चुनते समय पहुंचकर वह उसके कोंछ के फूल छीनकर भूमि पर फेंक देता था; उस दिन कुसुम को यह अनुभव होता कि मेरा माला

गूँथना आज सार्थक हो गया है। इन फूलों के साथ ही साथ मेरा भी जीवन चरितार्थ हो गया है। इस प्रकार महल में फूल और माला लेकर उपहार देने जाया करती थी वह अन्नपूर्णा को, किन्तु हृदय में उसके यह लालसा बराबर छिपी रहा करती थी कि किशोर आये, और यह फूल और माला मुझसे छीन ले। इस प्रकार अवस्था-वृद्धि के साथ ही साथ कुसुम के हृदय पर किशोर के अनुराग का रंग उत्तरोत्तर गाढ़ा ही होता जा रहा था।

कुसुम के हृदय में किशोर के प्रति आशक्ति बढ़ ही रही थी, इतने में सत्येन्द्र नामक एक युवक ने उसके साथ विवाह करने की इच्छा प्रकट करके उसका हृदय अपनी ओर आकर्षित करने के लिए तत्परतापूर्वक प्रयत्न करना आरम्भ कर दिया। पूना से आकर आजकल वह कलकत्ता में रहने लगा था।

सत्येन्द्र बड़ा प्रभावशाली युवक था। वह जब कभी भी कुसुम के प्रति घनिष्ठता प्रदर्शित करने का प्रयत्न करता, वह मुँह मटका देती, हँसी मजाक करने पर गालियाँ दे बैठती। कुसुम के शरीर का स्पर्श करने का प्रयत्न करने पर एक बार सत्येन्द्र को उसके कोमल हाथ की एक चपत भी खानी पड़ी थी। मन ही मन उसने स्थिर कर लिया था कि कर, बल, छल से जिस किसी प्रकार भी हो सकेगा कुसुम को अपने अधिकार में करके ही मैं रहूँगा।

एक दिन कुसुम को घर में अकेली देखकर उससे छेड़-छाड़ करने के विचार से सत्येन्द्र उसके पास पहुँचा। कुसुम बगीचे में टहल रही थी। उसके समीप पहुँचकर सत्येन्द्र ने कहा—संध्या के ऐसे सुखद समय में तुम्हारी-जैसी सुन्दरी के साथ ज़रा-सा प्रेमालाप करने का यह बहुत अनुकूल समय मालूम पड़ा मुझे।

कुसुम ने सत्येन्द्र को डांट दिया। उसने कहा—तुम चले जाओ यहां से। उसके उत्तर में आँखें मटकाकर सत्येन्द्र ने कहा—चला जाऊँगा, प्यारी, तुम घबराओ मत। किसी की दृष्टि पड़ने से पहले ही एक

छलाँग मारकर मैं बेड़े से बाहर निकल जाऊँगा ।

कुसुम के हृदय में भय का संचार हुआ अवश्य, किन्तु साहस का भाव प्रदर्शित करती हुई वह बोली—यदि तुम स्वयं नहीं जाते हो तो मैं तुम्हें मारकर भगाऊँगी यहाँ से ।

सत्येन्द्र ने दर्पपूर्ण स्वर में कहा—मेरी ओर सीधे मुँह ताकने वाला कौन है यहाँ ?

एकाएक कोड़े की चोट खाकर सत्येन्द्र चौंक पड़ा । साथ ही साथ उसके कान में एक पुरुष के कण्ठ से निकली हुई फटकार पहुँची—"बेअदब की पीठ पर कोड़ा लगाने की शक्ति मुझमें है ।"

सत्येन्द्र और कुसुम ने एक साथ ही घूमकर पीछे की ओर देखा तो किशोर खड़ा था । हाथ में उसके एक कोड़ा था ।

सत्येन्द्र को डाँटते हुए किशोर ने कहा—निकलो यहाँ से । खबरदार ! बाद को यदि कभी तुमने इस मकान के आस-पास भी पैर रक्खा तो तुम्हारे हाथ-पैर तोड़ दूंगा मैं !

सारा क्रोध मन ही मन दबाकर अपमानित भाव से सत्येन्द्र चला गया । उससे छुटकारा पाकर कुसुम ने भी कृतज्ञता पूर्ण दृष्टि से किशोर की ओर ताककर हँस दिया ।

इधर सत्येन्द्र की भृकुटि अब किशोर की ओर टेढ़ी हुई । प्रकट रूप से यद्यपि वह किशोर का घनिष्ठ मित्र था, किन्तु इस ताक में वह बराबर रहा करता कि कौन से ऐसे विशेष अवसर पर उसे नीचा दिखाया जाय, जिससे वह अधिक हानि का अनुभव कर सके ।

किशोर ने एक कार्य के लिए सत्येन्द्र को बहुत अधिक पुरस्कार देने का वचन दे रक्खा था । वह पुरस्कार प्राप्त करने के लिए उस विषय की सभी बातें चन्द्रगुप्त से छिपा रखनी थीं। सत्येन्द्र को कभी-कभी यह इच्छा होती थी अवश्य कि उसका रहस्य प्रकट करके सारा बदला चुका लूं, परन्तु पुरस्कार का लोभ उसकी इस प्रवृत्ति का बाधक हो रहा था।

जिस दिन चित्रगुप्त लापता हुआ था, उसी दिन सत्येन्द्र भी कहीं चला गया था। इससे लगातार तीन सप्ताह तक सत्येन्द्र की विभीषिका-मयी मूर्त्ति देखने का अवसर न पाकर कुसुम बहुत प्रसन्न हो रही थी। जिस दिन चन्द्रगुप्त बाबू का घुड़दौड़ का राकेट घोड़ा चोरी गया था, उसी दिन सत्येन्द्र को कुसुम ने बाग में छिपकर टहलते हुए देखा था और कुसुम का ध्यान इस ओर भी गया था कि उसे देखते ही वह उतावली के साथ खिसक गया था। इससे कुसुम को ज़रा भी आश्चर्य नहीं हुआ। बाद को फिर से मिलने के दिन वह राकेट जिस पेड़ की डाली में बँधा हुआ पाया गया था, उसी पेड़ के नीचे कुसुम ने सत्येन्द्र को देखा था, यह उसे स्मरण हो आया। इससे कुसुम के हृदय में रह-रहकर इस बात का सन्देह होने लगा कि इस वृक्ष के नीचे सत्येन्द्र के छिपे रहने, राकेट के गायब हो जाने और उसके फिर से मिल जाने आदि की घटनाओं में परस्पर बहुत घनिष्ठ सम्पर्क है।

राकेट के मिलते ही सत्येन्द्र भी आ गया। किशोर के कारण कुसुम के मकान के इर्द-गिर्द तक पहुंचने का साहस वह नहीं कर सका। परन्तु उसे देखने की लालसा तो सदा ही सत्येन्द्र के मन में अधीरता उत्पन्न करती रहती थी।

एक दिन सत्येन्द्र को मालूम हुआ कि आज किशोर अपने भाई की खोज में कहीं बाहर गया है। इसलिए साहस करके वह कुसुम के घर के समीप गया और एक झुरमुट की आड़ में इस विचार से छिप रहा कि कुसुम जब घर से निकले तब मैं एकाएक पहुँचकर उसके साथ में हो लूं, जिससे यह सिद्ध हो कि रास्ते में चलते-चलते अनायास हमारी-उसकी मुलाकात हो गई है।

साँझ होने से ज़रा देर पहले कुसुम ठाट-बाट बनाकर फूलों से भरी हुई झाबी हाथ में लटकाये हुए घर से निकली। सत्येन्द्र का अनुमान था कि कुसुम फूल लेकर महल में जा रही होगी। परन्तु बगीचे का बेड़ा पार करने के बाद फाटक बन्द करके जब वह विपरीत दिशा की ओर

चली तब सत्येन्द्र के मन में यह बात आई कि वह जा रही है देवी जी के मन्दिर में फूल देने के लिए।

कुसुम जब आगे की ओर बढ़ने लगी तब सत्येन्द्र उस झुरमुट की आड़ से निकला और वह एक दूसरे रास्ते से इस विचार से खूब तेजी के साथ चला कि घूमकर आगे से कुसुम से मिलूँ। परन्तु काफी दूर तक जाने के बाद घूमकर जब वह उस रास्ते पर आया, जिस पर से होकर कुसुम जा रही थी और उससे मिलने के विचार से पीछे की ओर लौटा तब एकाएक क्रोध और क्षोभ के कारण उसका शरीर थरथर काँपने लगा। सत्येन्द्र ने देखा कि मेरा सारा संकल्प व्यर्थ करके किशोर पहले से ही कुसुम को दखल किये हुए है। तो क्या ये दोनों इस प्रकार एकान्त में मिलने के लिए पहले से ही निश्चय कर चुके थे और उसके भाई को खोजने के लिए बाहर जाना तथा इसका देवी जी के मन्दिर में फूल ले जाना केवल बहाना था ?

सत्येन्द्र बाग में छिपकर वृक्षों की आड़ से होकर चलते-चलते देखने लगा कि आज किशोर का चित्त काफी प्रसन्न नहीं है। सुन्दरी युवती का मधुर संग पाकर भी उसका चित्त प्रफुल्लित नहीं हो सका है। दाहिने हाथ की मुट्ठी से बाईं हथेली ठोंक-ठोंककर मानो वह कुसुम से कुछ प्रस्ताव कर रहा है और उसे स्वीकार करने के लिए उसके ऊपर दबाव डाल रहा है अथवा उसे वह भय प्रदर्शित कर रहा है। और समीप जाकर सत्येन्द्र ने देखा तो कुसुम के नेत्रों में जल था। किशोर पता नहीं कौन-सा ऐसा एक प्रश्न या प्रस्ताव कुसुम के सम्मुख बार-बार उपस्थित कर रहा था, जिसे स्वीकार करने की प्रवृत्ति उसे नहीं थी। हो रही अन्त में आँसुओं से भीगा हुआ अपना मुंह ऊपर करके कुसुम ने अपनी सहमति प्रकट की, जिससे सन्तुष्ट होकर किशोर प्रसन्न हो उठा। कुसुम के कन्धे पर हाथ रखकर प्यार से उसके नेत्रों का जल पोंछते-पोंछते उसने कुछ कहा, बाद को झटपट सघन बाग में प्रविष्ट होकर वह अदृश्य हो गया।

चुपचाप आगे बढ़ते-बढ़ते सत्येन्द्र कुसुम के बिलकुल समीप पहुँच

गया और उसके सामने वह खड़ा हो गया। कुसुम अभी तक चिन्ता में निमग्न होकर अन्यमनस्क भाव से चली जा रही थी, किन्तु एकाएक सत्येन का आविर्भाव हो जाने के कारण चकित होकर भय के मारे चिल्लाती हुई वह दो पग पीछे हट गई। क्षण भर के बाद ही स्वाभाविक अवस्था में आकर उसने कहा—ओह, किस तरह का भय उत्पन्न कर दिया तुमने मेरे हृदय में! कितने दुस्साहसी हो तुम! उस दिन चाबुक खाकर भी तुमने जरा-सी ग्लानि का अनुभव नहीं किया? छोटे आदमी हो न!

कुसुम की इन बातों के कारण सत्येन्द्र इतना अधिक चिढ़ गया कि लट्ठ सीधी कर ली, परन्तु कुसुम डरी नहीं। व्यंग्य के स्वर में उसने कहा—बड़े वीर हो न तुम जो एक छोटी-सी बालिका के ऊपर हाथ छोड़कर बाँह पुजाना चाहते हो! राह चलती हुई एक स्त्री के पीछे-पीछे चोर की तरह चलने और उससे छेड़-छाड़ करने में तुम्हें लज्जा नहीं आ रही है? क्या करने आये हो तुम यहाँ?

सत्येन्द्र ने भी व्यंग्य के ही स्वर में कहा—अभी तक तो तुम किशोर की हो नहीं पाई हो जो तुम्हारी आज्ञा लेकर ही चलना-फिरना होगा! तुम्हारी तरह का मैं नहीं हूँ जो दूसरों की आँखों की लालिमा देखते ही अपनी आँखें आँसुओं स डुबो दूँगा?

सत्येन्द्र की इस बात से कुसुम कुछ चकित तो अवश्य हुई, किन्तु दर्पमय स्वर में बोली—तुम्हारे भय से आँसुओं की झड़ी लगा दूँ, ऐसी लड़की मैं नहीं हूँ!

"यह तो ठीक है, परन्तु किशोर बाबू के भय से तो अभी ही तुम छाती तक धो चुकी हो!

कुसुम का मुँह सूख गया। फिर भी कण्ठ-स्वर ऊँचा करके वह बोली—झूठ बोलने में तुम्हें लज्जा नहीं आती?

"झूठ बोल रहा हूं मैं? किशोर ही तो था जो अभी कान पकड़े हुए तुम्हें टहला रहा था।"

कुसुम गरज उठी—इतना साहस हो गया है तुम्हें? तुम मेरा अप-मान करते हो ? किसी दिन किशोर बाबू से कहकर तुम्हारी पीठ पर फिर कोड़े लगवाए जायँ तब तुम दुरुस्त हो जाओगे।

सत्येन्द्र ने कहा—किशोर बाबू ने ही तो तुम्हारा दिमाग आसमान पर चढ़ा रक्खा है। मृग-तृष्णा दिखाकर उसने तुम्हारी मति भ्रष्ट कर दी है और अपने पाप कर्म की सहकारिणी बना रक्खा है तुम्हें। अभी-अभी अपने अनुचित प्रस्ताव पर तुम्हें सहमत कर के, तुम्हारे आँसुओं की उपेक्षा करके, वह चला गया है।

कुसुम के मुख पर भय की छाया उदित हो आई। परन्तु उसकी आकृति पर गर्व का जो अदम्य भाव था उसे वह सत्येन्द्र के सामने ज्यों का त्यों बनाए रखने का प्रयत्न करने लगी। रूखे स्वर में उसने कहा—लो, अब रास्ता छोड़ दो, जिससे घर पर जाकर मैं निश्चिन्त हो सकूँ।

"तुम यदि न निश्चिन्त हो सकोगी तो ऐसा और कौन है जो चिन्ता रहित जीवन व्यतीत करेगा। बहुत ही घने और एकान्त बाग में तुम्हारा घर है। यहाँ यदि खून-खच्चर हो जाय, तो भी किसी को पता नहीं चल सकता; यह बात तुम्हें बहुत अच्छी तरह मालूम है।"

सत्येन्द्र की इस बात ने कुसुम के कण्ठ-स्वर को मानो दबा दिया। दबी जबान से वह बोली—इन सब बातों का मतलब ?

"मतलब यही है कि यदि मैं चाहूं तो ऐसी कितनी बातें प्रकट कर सकता हूँ. जिन्हें प्रकाश में आने देना तुम्हें अभीष्ट नहीं है।"

कुसुम के पैरों को मानों किसी ने कहीं पर बाँध दिया। सतर्क भाव से उसने कहा—ऐसी कौन-सी बात है, जिसे प्रकट कर सकते हो तुम ?

कुसुम को एक तो यह जानने का कौतूहल था कि कौन-सी गुप्त बात इस आदमी ने जान रक्खी है, दूसरे वह डर भी रही थी कि पता नहीं, कौन-सी ऐसी बात प्रकट कर देगा यह जो मेरे अनिष्ट का कारण हो सकती है। इधर कुसुम के ऊपर व्यंग्य कसते हुए सत्येन्द्र ने कहा—तुम्हें भय किस बात का है ? मकान तुम्हारा है सघन बाग में, तिस

पर किशोर का बहुत ही गुप्त रूप से किया गया दुष्कर्म है। पेड़ पर चढ़कर झाँकते हुए यदि किसी ने उस दुष्कर्म को देख भी लिया है तो उसकी बात पर विश्वास ही कौन करने लगा ?

कुसुम ने हाँफते-हाँफते कहा—इसका मतलब यह है कि शायद तुम चोर की तरह दूसरों का घर झाँकते फिरते हो ?

अपना कंठ-स्वर प्रणय से गद्गद करके सत्येन्द्र ने कहा—मैं तुम्हें चाहता हूं कुसुम ! मेरे द्वारा तुम्हारा किसी प्रकार का भी अनिष्ट होना सम्भव नहीं है। तुम्हारे घर में एक नवयुवती को चाय की तरह कोई चीज पिलाई गई थी, बाद को उसी चीज के प्रभाव से उसकी मृत्यु हो गई है। ठीक है न ?

कुसुम को मानो मूर्च्छा-सी आ रही थी। असमर्थ भाव से हाँफते-हाँफते उसने कहा—रास्ता छोड़ो, मुझे घर जाने दो।

"जरा देर तक और धैर्य धारण किये रहो, मुझसे तुम डर क्यों रही हो इतना ? तुम्हें यदि यह मालूम होता कि तुम्हारी चिन्ता से जाग-जागकर कितनी रात्रियाँ व्यतीत कर दी हैं मैंने, तब तुम मुझसे इस तरह का निष्ठुरता का व्यवहार न कर सकतीं। तुम्हारे उपेक्षापूर्ण व्यवहार का उत्तर उपेक्षा के ही साथ देने का मैंने प्रयत्न किया है। मुझे प्राप्त करके जो अन्य कितनी ही युवतियाँ अपने आपको कृतार्थ समझेंगी, उनकी ओर अपने मन को ले जाने का प्रयत्न मैंने किया है; परन्तु सफलता मुझे नहीं मिल सकी। तुम्हारे लिए मैं पागल हो रहा हूँ। तुम्हें प्राप्त करने के लिए मैं चोरी, डकैती तथा हत्या आदि सभी कुछ करने को तैयार हूं। यदि तुम मेरे साथ विवाह करने पर सहमत न होओगी तो पता नहीं मैं कैसा अनर्थ कर बैठूँ। समझ रक्खो, मेरा नाम है सत्येन्द्र !

सत्येन्द्र की यह बात सुनते ही कुसुम का मुँह सूख गया। उसकी उग्रता शान्त करने के विचार से वह बोली—अच्छा, अच्छा मैं सोचकर देखूँगी। इस समय मुझे जाने दो, रास्ता छोड़ो।

"चलो चलो, मैं भी तुम्हारे साथ-साथ चलूँ; लोग देखें कि मैं तुम्हारा कृपा-पात्र हूं, भावी स्वामी हूं ।"

और कोई उपाय न देखकर कुसुम ने सत्येन्द्र की आज्ञा का पालन किया। अन्त में अपनी फुलवाड़ी के फाटक के पास पहुँचकर वह बोली—अच्छा, अब मैं चलती हूं, तुम भी चलो।

"अच्छी बात है। परन्तु जब दोनों हाथ एक हो जायेंगे तब तुम इस तरह फाटक के बाहर से ही मुझे न खदेड़ सकोगी।"

कुसुम भीतर की ओर चली। सत्येन्द्र वहीं खड़ा-खड़ा लोलुप दृष्टि से उसकी ओर ताकता रहा। कुछ कदम आगे बढ़ने के बाद कुसुम फिर लौटी। सत्येन्द्र के पास आकर उसने कहा—तुम जो दवा आदि पिलाने की बातें कह रहे थे, वे सब निस्सार हैं। लता यहाँ आई थीं और उन्हें मैंने चाय पिलाई थी। चाय पीकर वे चली गईं। बाद को क्या हुआ, यह सब मैं नहीं जानती। तुम झूठी बात मत बकते फिरो भाई, इससे दूसरे पर संकट आ सकता है।

"अच्छा, अच्छा, मैं बहुत ही शान्त और शिष्ट आदमी की ही तरह मुँह बन्द किये रहूँगा। परन्तु यदि तुम मेरा मुँह बन्द कर दो तब।

"इसका मतलब ?"

लोलुपतामयी दृष्टि से एक बार कुसुम की ओर ताककर सत्येन्द्र ने एक बार दाँतों से अपना ओंठ दबाया, बाद को उसने जीभ निकालकर ओंठ चाट दिया।

कुसुम का सारा शरीर रोमांचित हो उठा। सत्येन्द्र के संकेत को हृदयंगम तक करने में वह घृणा का अनुभव करने लगी। कातर स्वर में वह बोली—नहीं, नहीं, यह सब अभी रहने दो।

"तब भला मेरा मुँह किस तरह बन्द होगा ?"

हताश होकर कुसुम ने बेड़े के भीतर से मुँह बढ़ा दिया। सत्येन्द्र ने झुककर उसका चुम्बन किया। बाद को अत्यन्त ही तृप्ति का अनुभव करते हुए उसने कहा—आह ! कितना मधुर है यह चुम्बन, मानो मधु

है ! यह मधुर स्वाद प्राप्त करने के लोभ से बीच-बीच में बन्द मुँह खोलने का प्रलोभन हो सकता है। परन्तु तुम्हें प्राप्त कर लेने पर यह मुँह खोलने का तो फिर अवसर ही न रहेगा।

सत्येन्द्र की ये रसिकतामयी बातें सुनने के लिए खड़ी न रहकर कुसुम भीतर की ओर बढ़ी। उसकी ओर ताकते हुए सत्येन्द्र ने कहा—कुसुम, क्या तुम कल भवानी का शृंगार देखने चलोगी।

ज़रा पीछे की ओर ताकती हुई कुसुम बोली—हाँ, जाऊँगी। साथ में माँ भी जायँगी।

"नहीं, मेरे साथ चलना होगा। रास्ते में जो पलास का वृक्ष है उसके नीचे खड़े-खड़े दस बजे मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करता रहूँगा।

कुसुम ने सोचा कि इनकार करने पर यह पिंड छोड़ने वाला है नहीं, इससे बोली—अच्छी बात है, उस समय तक मैं वहाँ पहुँच जाऊँगी।

भय, क्रोध और घृणा के मारे कुसुम का मुख बिल्कुल ही प्रभाहीन हो गया था। उधर सत्येन्द्र बहुत ही संतोषमयी दृष्टि से उसकी आगे की ओर बढ़ती हुई मूर्ति को मुग्धभाव से देखता रहा।

एक दिन खांडेकर नीचे के कमरों की तलाशी ले रहा था। सीढ़ी के पास खड़े-खड़े सुनील पहरा दे रहा था। इसलिए कि यदि कोई नीचे की ओर जाता दिखाई पड़े तो सीटी बजाकर वह खांडेकर को सावधान कर दे। परन्तु किसी नौकर के लौटने से पहले ही कागज में कोई चीज लपेटते-लपेटते एक कमरे से निकलकर खांडेकर सुनील के पास लौट आया। तब वे दोनों घर से निकलकर बगीचे की ओर चले।

कागज में लपेटी हुई चीज को कोट की भीतर वाली जेब में रखकर बटन लगाते-लगाते खांडेकर ने कहा—जली हुई साड़ी के मेल का ही एक ब्लाउज भी मिला है। कौशल्या के बक्स में रक्खा हुआ था वह। इससे यह बात भली भांति प्रमाणित हो जाती है कि लता की मृत्यु से कौशल्या का सम्पर्क अवश्य है। यह हो सकता है कि उसे मारने के लिए स्वयं कौशल्या ने किसी प्रकार का प्रयत्न न किया हो, परन्तु इतना तो उसे अवश्य ही मालूम होना चाहिए कि लता किस प्रकार मरी है और किस प्रकार उसे यहाँ लाया गया है। उसके कपड़ों को जला देने का भार कौशल्या पर ही छोड़ा गया था।

"परन्तु यह सब कौशल्या को दिया किसने होगा, क्या कुछ अनुमान होता है तुम्हें ?"

"लता की लाश तो चित्रगुप्त के ही कमरे में, उसके सन्दूक में भरकर उसी के कम्बल से ढँकी हुई पाई गई है। इसके सिवा घर के सभी लोगों, विशेषतः सुनीता तक से यही सुनने में आया है कि चित्रगुप्त लता के प्रति विशेष रूप से अनुरक्त था। लता की मृत्यु के साथ ही साथ चित्रगुप्त अदृश्य भी हुआ है। इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि चित्रगुप्त लता के प्रेम-पाश में बंधा हुआ था, किन्तु भंडाफोड़ होने की

आशंका देखकर वह इस प्रकार का दुष्कर्म कर बैठा है। मैं तो उसके स्वभाव से परिचत हूँ नहीं, इससे निश्चित रूप से कुछ कह नहीं सकता।"

सुनील ने कहा—चित्रगुप्त के द्वारा इस तरह का घृणित कार्य होना सम्भव नहीं है। वह बहुत ही लज्जाशील और शान्त प्रकृति का मनुष्य है। किसी स्त्री को छेड़कर उससे बातें करना या उसका प्रेम प्राप्त करने के लिए अपनी ओर से प्रयत्न करना उसके स्वभाव के विपरीत है।

खांडेकर ने कहा—ठीक इसी प्रकार के ही लोग तो चालबाज औरतों के फेर में पड़कर बिलकुल नष्ट हो जाते हैं। प्रलोभन में पड़कर एक बार जब वे कोई दुष्कर्म कर डालते हैं तब घबराहट के मारे एक के बाद दूसरा और दूसरे के बाद तीसरा भी करते जाते हैं। कोई आश्चर्य नहीं कि आपके मित्र का स्वभाव परिवर्तित हो गया हो।

सुनील बोल उठा—ये सारी बातें बहुत ही जटिल रहस्य के दृढ़ आवरण में ढँकी हुई हैं। केवल इतनी ही बात अभी तक स्पष्ट हो सकी है कि कौशल्या को ऐसी बहुत-सी बातें मालूम हैं, जिन्हें हम नहीं जानते अच्छा होगा कि अब उसे पुलिस के हवाले कर दिया जाय और प्रकट रूप से उस पर मामला चलया जाय।

खांडेकर ने कहा—इतनी उतावली न करनी चाहिए भाई ! एका-एक कोई काम कर बैठना अच्छा नहीं है। आप यह भूल रहे है कि कौशल्या अन्नपूर्णा देवी की एक विश्वास-पात्र भृत्या है। कोई आश्चर्य नहीं कि उसने केवल अपनी स्वामिनी की आज्ञा का ही पालन किया हो। अन्नपूर्णा देवी चित्रगुप्त का विवाह सुनीता के साथ किसी प्रकार भी न होने देने की प्रतिज्ञा तो कर ही चुकी थीं।

"यह सारी दुर्घटना किशोर और उसकी माता के कुचक्र का ही फल है। किशोर अपने भाई की वाग्दत्ता बधू पर लोलुप दृष्टि लगाये हुये है, रुपये उसे खर्च भर के लिए कभी जुटते नहीं, पिता के रुपये यह बराबर चुराता रहता है······।"

सुनील ये बातें बड़ी गर्माहट के साथ कह रहा था। ठीक उसी समय

अन्नपूर्णा वहाँ आ पहुँचीं। उसे उत्तेजित भाव से बोलते हुए देखकर उन्होंने पूछा—क्या बात है सुनील ? क्या रहस्य का कोई सूत्र कहीं से मिल गया है ?

अन्नपूर्णा के इस प्रश्न ने सुनील की क्रोधाग्नि पर घृत की आहुति का काम किया। अधीर होकर कर्कश स्वर में वह बोल उठा—किस तरह से मिल सकेगा ? माता-पुत्र ने मिलकर सारा कुचक्र चलाने के बाद मुझसे पूछने आई हो कि कुछ पता चल सका है या नहीं ?

अन्नपूर्णा ने आँखें निकालकर चकित भाव से सुनील की ओर देखा। वे बोलीं—यह क्या कह रहे हो सुनील ?

पहले की ही तरह कर्कश स्वर में सुनील ने कहा—मैं जो कुछ कह रहा हूँ, वह आपको भली-भाँति मालूम है। हमें ऐसे प्रमाण मिल गये हैं जिनके कारण अब आपका इस प्रकार बनना काम न दे सकेगा।

सुनील की इस बात से अन्नपूर्णा का हृदय व्यथित हो उठा। साथ ही उन्होंने अपने आपको कुछ अपमानित भी अनुभव किया। दर्पमय स्वर में वे बोलीं—तुम मुझ पर सन्देह करते हो ? अच्छी बात है। मालिक के सामने अपने प्रमाण उपस्थित करना, वे विचार करेंगे मामले पर। अन्त में तैश में आकर वहाँ से वे चलीं गईं। एकाएक इस प्रकार की घटना हो जाने के कारण सुनील और खांडेकर भी चिन्ता से अभिभूत हो उठे।

जरा देर के बाद सुनील के कन्धे पर हाथ रखकर खांडेकर ने कहा—काम तो अच्छा नहीं हुआ दोस्त ! बहुत धीरभाव से अनुसन्धान करने पर रहस्य का उदघाटन किया जा सकता है। इस मामले में यदि कहीं किसी प्रकार की उतावली की गई तो सारा परिश्रम ही निरर्थक हो जाता है। अपराधी को जब तक भली भाँति मुट्ठी में न कर लिया जाय तब तक सन्देह न प्रकट करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से वह सावधान हो जाता है।

सुनील स्वयं भी इस बात का अनुभव कर रहा था। खांडेकर की

बात का कोई उत्तर न देकर वह मौनभाव से यही सोच रहा था कि आगे मेरा कर्त्तव्य क्या होना चाहिए।

सुनील और खांडेकर दोनों ही चुपचाप बगीचे में टहलने गये। ज़रा ही देर के बाद नौकर ने आकर कहा कि मालिक आपको बुला रहे हैं।

नौकर के साथ घर में जाकर सुनील ने देखा तो चन्द्रगुप्त क्रुद्धभाव से कुछ कठोर-से होकर खड़े थे। उनके पास ही अन्नपूर्णा भी उद्धतभाव से खड़ी थीं।

सुनील के समीप पहुँचते ही चन्द्रगुप्त ने ज़रा-सा रूखे स्वर में कहा—सुनील मित्र के प्रति तुम्हारे हृदय में अधिक प्रीति तथा मित्र के वियोग के कारण अधिक दुःख होने के कारण उतावले होकर तुम बहुत बड़ी भूल कर बैठे हो। किशोर का स्वभाव कुछ सदोष है अवश्य, परन्तु अभी वह इस तरह का नीच नहीं हो गया है कि अपने भाई तथा एक निरपराध स्त्री की, जिससे कि उसका कोई सम्पर्क नहीं है, हत्या कर डालेगा। इसके सिवा उसकी माँ के सम्बन्ध में इस प्रकार की कल्पना करना कि ऐसे दुष्कर्म में उनका हाथ हो सकता है, नितान्त ही असंगत है।

सुनील दोषी सिद्ध करने जा रहा था दूसरे को, किन्तु एक प्रकार का दोष उसी पर आरोपित कर दिया गया। इससे उसे कुछ तो लज्जा आई, कुछ क्रोध आया और कुछ वह उतावला भी हो उठा और बोला—मुझे जो-जो प्रमाण............।

सुनील की बात काटकर चन्द्रगुप्त ने कहा—आकाश-पाताल एक करके भी अभी तक पुलिस और जासूस किसी प्रकार के सूत्र का अनुसंधान नहीं कर सके हैं, यद्यपि उनका यह प्रतिदिन का कार्य है। ऐसी परिस्थिति में तुम-जैसे व्यक्ति का, जिसे इस प्रकार के कार्य का कोई अनुभव नहीं है, यह समझना कि हमने प्रमाण प्राप्त किये हैं, केवल भ्रम है। परन्तु यदि वैसी कोई बात हो तो पुलिस को............।

पुलिस का नाम सुनते ही अन्नपूर्णा का मुँह सूख गया। व्यस्त होकर वे बोल उठीं—पुलिस से पहले तुम्हीं क्यों नहीं उन प्रमाणों पर विचार करते ?

चन्द्रगुप्त ने कहा—यदि तुम लोगों का कुछ अपराध होगा तो उसके कारण मैं भी अपराधी हूँगा। हमारे अपराध के सम्बन्ध में विचार करने वाले दूसरे लोग होंगे, हम स्वयं कैसे उनके सम्बन्ध में विचार करने के अधिकारी हो सकते हैं ?

इस घटना के बाद उस घर में रहने में सुनील बहुत ही संकोच का अनुभव करने लगा। इससे चन्द्रगुप्त से विदा लेकर एक धर्मशाला में जाकर उसने अड्डा जमाया।

एक दिन कुसुम के मकान के समीप के एक ऊँचे-से पेड़ पर चढ़कर सुनील बैठा। काफी देर तक प्रतीक्षा करने के बाद उसने देखा कि कुसुम घर से निकली और उसने किशोर से मुलाकात की। जरा देर की बातचीत के बाद कुसुम रोने लगी। किशोर उससे कुछ और कहकर चला गया। कुसुम भी आँखें पोंछती हुई घर के भीतर गई। जरा देर के बाद वह फिर घर के भीतर से निकली। इस बार हाथ में वह एक पोटली लिए हुए थी। उस पोटली को लिए हुए वन में गई। सुनील ने उस पोटली को देखकर अनुमान किया कि सम्भवतः कुसुम अँगौछे में बाँधकर किसी के लिए भोजन ले जा रही है।

वन में जाकर कुसुम अदृश्य हो गई। जरा देर बाद ही लौटकर वह फिर आई। परन्तु हाथ में उसके वह पोटली नहीं थी। यह देखकर सुनील का कौतूहल बहुत अधिक बढ़ गया। वह सोचने लगा कि आस-पास यहाँ कोई बस्ती है नहीं, जहाँ से होकर कुसुम लौटी आ रही है। इससे वन में अवश्य कोई आदमी छिपा हुआ है, जिसे कोई खाद्य सामग्री देकर वह लौट आई है। यह भी सम्भव है कि किसी संकेत स्थान पर किसी के लिए कोई चीज रखकर यह आई होगी।

सुनील साथ में थोड़ा-सा जल और कुछ खाद्य सामग्री लेकर पेड़ पर चढ़ा था। इसलिए साँझ तक वह उस पर से उतरा नहीं। परन्तु उसे जो कुछ देखने की आकांक्षा थी, वह देखने को उसे न मिल सका। सन्ध्या का अन्धकार प्रगाढ़ होता जा रहा था। इससे उसके मन में यह बात आ रही थी कि अब उतरकर धर्मशाला में चलूँ। इतने में उसे जान पड़ा कि मानो कोई सीटी बजा रहा है। इससे चकित होकर वह

जिस ओर से सीटी की आवाज आ रही थी, उसी ओर अधिक सावधान होकर ताकने लगा। परन्तु अन्धकार में उसे कुछ दिखाई न पड़ा। अन्त में अपने कौतूहल का दमन करने में असमर्थ होकर सुनील पेड़ पर से उतर आया। एक झाड़ी में छिपकर वह ताक रहा था, चारों ओर ताकते-ताकते कुसुम के घर के पास पहुँचा। किसी के आने की आहट पाते ही कुसुम ने भी झटपट आकर बेड़े में लगे हुए फाटक की साँकड़ खोल दी। आगन्तुक चारों ओर ताकने के बाद बड़ी ही तेजी के साथ भीतर घुस गया। बाद को कुसुम ने भी उसका अनुसरण किया।

सुनील खड़े-खड़े सोच रहा था कि यह आदमी अवश्य कोई अपराध करके पुलिस के भय से वन में छिपा हुआ है, अन्यथा शिकारी के भय से पशु के समान वन के लता-कुंज में अपने आपको इस प्रकार छिपाये रखने के लिए वह क्यों प्रयत्नशील रहता है? इस आदमी के पकड़े जाते ही लता की मृत्यु आदि का रहस्य खुल जायगा।

सुनील कुसुम के घर के भीतर प्रवेश करने के सम्बन्ध में सोच-विचार कर ही रहा था, इतने में दो-तीन आदमियों ने तेजी के साथ आकर उसे पकड़ लिया। एकाएक आक्रमण होने के कारण पहले तो वह हक्का-बक्का हो गया; बाद को शरीर का सारा बल लगाकर अपने आपको छुड़ाने का प्रयत्न करने लगा। इतने में एकाएक चकित होकर वह बोल उठा—खांडेकर साहब, किसको पकड़वा रहे हैं आप?

खांडेकर ने आँखें फाड़-फाड़कर सुनील की ओर देखा। बाद को वह अपने आदमियों से बोला—इन्हें छोड़ दो, ये मेरे साथी हैं। तुम लोग सावधानी के साथ इसी मकान पर निगरानी रक्खो।

बातचीत करते-करते खांडेकर सुनील के साथ धर्मशाला गया। उसकी उत्कण्ठा निवृत्त करने के लिए वह कहने लगा—आपके पास से चले जाने के बाद यहाँ के मामले में बिल्कुल निश्चिन्त होकर मैं उदासीन नहीं हो सका। मैं किशोर की कारसाजी का पता लगाने का प्रयत्न कर रहा था।

सुनील और खांडेकर में इस प्रकार की बातें हो रही थीं, इतने में धर्मशाला के एक नौकर ने आकर कहा—खांडेकर साहब से मिलने के लिए एक आदमी आया है, वह अपना नाम तुलसी बतला रहा है।

नौकर को उसे भेज देने का आदेश करके खांडेकर ने सुनील से कहा—यह वही आदमी है, जिसे मैंने चित्रगुप्त के घर में नौकर रखवाया है। उससे बहुत-सी बातें मालूम होंगी।

"तो क्या यह भी खुफिया-विभाग का आदमी है ?"

"हाँ, नौकर के रूप में रहकर यह कौशल्या और रामू के आचरण का अध्ययन किया करता है।"

इतने में नौकर के वेश में आकर एक आदमी ने प्रवेश किया। खांडेकर ने उससे कहा कि भीतर से साँकड लगा लीजिए तब बैठिए।

खांडेकर ने पहले-पहल आगन्तुक को सुनील का परिचय दिया। तब वह आश्वस्त हुआ और दरवाजा बन्द करने के बाद आकर निस्सं-कोच-भाव से बिस्तरे पर बैठा। खांडेकर के साथ उसे समता का व्यवहार करते देखकर सुनील ने भी समझ लिया कि तुलसी साधारण भृत्यों की श्रेणी का आदमी नहीं है।

तुलसी ने कहा—चन्द्रगुप्त बाबू के घर में थोड़े ही दिनों के बीच में जो दो-दो दुर्घटनायें हुई थीं, साथ ही एक हत्या भी हो गई थी, इससे

डर के मारे घर के सभी नौकर और नौकरानियाँ छोड़-छोड़कर चली गईं। रामू और कौशल्या का आसन अवश्य नहीं डगमग हुआ। आपकी चिट्ठी लेकर जैसे ही मैं पहुँचा, वैसे ही चन्द्रगुप्त बाबू ने मुझे नियुक्त कर लिया। काम हाथ में लेते ही मैंने रामू से खूब मित्रता कर ली। कौशल्या और मुझमें तो बाकायदा प्रेम हो गया। उसे मैंने समझा दिया है कि यदि तुम मेरे इस शून्य जीवन की अधीश्वरी बनना स्वीकार करो तो जीवन-निर्वाह के लिए तुम्हें फिर दासीत्व न करना पड़ेगा। मेरी इस बात पर कौशल्या बहुत-कुछ सहमत भी हो चली है। उसके सामने मुझे बहुत-सी प्रणयपूर्ण बातें करनी पड़ती हैं। उसी सिलसिले में वह अपने हृदय की भी कोई-कोई बात उगल देती है। एक दिन बात ही बात में वह बोली—यहाँ के जिन नौकरों और नौकरानियों ने नौकरी छोड़ी है, वे सब भूत से डरकर भागे हैं।

खांडेकर ने हँसकर कहा—भूत से क्या चुड़ैल से ?

चुड़ैल का ही डर है वहाँ। आप लोग हँस रहे हैं; परन्तु वहाँ रात के समय सचमुच पीठ पर बिखरे हुए बाल लटकाये हुए एक रमणी-मूर्ति सारे घर में घूमती-फिरती दिखाई पड़ती है। चन्द्रगुप्त के घर में एक नौकरानी और आई है। नाम है उसका कल्याणी। उसके भी प्रेम में पड़ गया हूं मैं। कल्याणी ने चुपके-चुपके मुझसे कहा है—किशोर बाबू रात्रि में माता-पिता से छिपाकर गुप्त सीढ़ी से प्रायः बाहर चले आया करते हैं और किसी-किसी दिन साथ में एक स्त्री को लेकर लौट आते हैं। किसी-किसी दिन सुदूर स्थान में जाने का बहाना करके वे घर से निकलते हैं; किन्तु गुप्त रास्ते से वे फिर भीतर चले आते हैं। रामू उनके लिये द्वार खोल रखता है। परसों वे बम्बई जाने के बहाने से घर से निकले थे, परन्तु उसी दिन रात्रि में वे फिर लौट आये हैं। मैंने पहले से ही इस बात का अनुमान कर रक्खा था कि वे लौट आयेंगे, इसलिए एक चोर-कोठरी में छिप गया था। छिपे-छिपे मैंने स्वामी और सेवक की बहुत-सी बातें सुन ली हैं, यद्यपि वे लोग फिस-फिस करके बातें कर

रहे थे। मैंने देखा कि रामू ने किशोर बाबू पर बहुत ही प्रभाव जमा रक्खा है। वह उससे बराबरी के दावे के साथ बातें करता है, कभी-कभी तो डाँट भी देता है किशोर को। तीन-चार बार किशोर बाबू के मुँह से यह बात मैंने सुनी—और थोड़े दिनों तक धैर्य धारण किये रहो, समय आने पर मैं तुम्हें प्रसन्न कर दूँगा पहले हमारा यह काम तुम सिद्ध कर दो······।"

बात काटकर खांडेकर बीच में ही बोल उठा—किस काम के सम्बन्ध में यह बात कह रहा था वह ?

तुलसी ने कहा—यह बात नहीं मालूम हो सकी है मुझे। परन्तु रंग-ढंग से मालूम यही पड़ा कि कोई षड्यंत्र चल रहा है इन लोगों में। इतने में रामू बोल उठा—तुलसी विश्वास-योग्य आदमी नहीं मालूम पड़ता। वह हर एक बात को न जाने कैसे कान खड़ा करके सुनने का-सा प्रयत्न करता है। यह बात सुनते ही मैं वहाँ से खिसक आया और रसोईघर के द्वार पर बैठे-बैठे ऊँघने-सा लगा।

बड़ी देर के बाद लौटकर रामू आया और मुझसे पूछने लगा—तुलसी, क्या तुम सो रहे हो ?

"हाँ भाई, बैठे ही बैठे नींद आ गई।"—कण्ठ-स्वर मैंने इतना भारी कर लिया था, मानो बहुत ही गम्भीर निद्रा में सो रहा था मैं।

रामू ने मुझसे कहा—तुम बैठे-बैठे कष्ट क्यों कर रहे हो ? जाकर लेट क्यों नहीं जाते हो ? अब तो कोई काम-काज है नहीं।

रामू के आग्रह करने पर मैं जाकर बिस्तरे पर लेट गया; परन्तु निद्रा मुझे नहीं आ सकी। खूब सतर्क-भाव से कान खड़ा करके मैं इस बात की टोह लेने लगा कि कहाँ क्या हो रहा है ? इधर मेरे लेटते ही रामू वहाँ से चला गया।

चारों ओर निस्तब्धता हो जाने पर मैं बिस्तरे पर से उठ गया। बहुत धीरे-धीरे पैर रखते हुए मैं उस ओर पहुंचा, जहाँ पतली सी गली के दोनों ओर कतार के कतार कमरे तथा चोर कोठरियाँ बनी हुई थीं।

और पास ही गुप्त सीढ़ी भी बनी हुई थी। उस समय वहाँ कोई था नहीं एक कमरे में किशोर बाबू का बिस्तरा लगा हुआ था। उसी कमरे में लालटेन जल रही थी, जिसकी बत्ती इतनी कम कर दी गई थी कि उसके क्षीण प्रकाश में स्पष्ट रूप से कुछ दिखाई नहीं पड़ता था।

एक गुप्त सीढ़ी के पास से सामने की ओर झाँककर मैंने देखा तो किशोर बाबू एक दूसरी सीढ़ी के सामने दरवाजे से बाहर इधर-उधर ताकते हुए अधीर भाव से टहल रहे थे। रामू वहाँ नहीं था।

बड़ी देर के बाद लौटकर रामू आया। उसके साथ में सत्येन्द्र था। वह सफेद पत्थर के चौके की तरह की कोई चीज लादे हुए था। किशोर बाबू ने बहुत ही मन्द स्वर से कहा—कन्नी और सुर्खी ले आये हो ?

सत्येन्द्र ने उत्तर दिया—वहाँ वे सब चीजें पहले से ही रक्खी हुई हैं।

इसके बाद वे तीनों ही आदमी बाग में चले गये। मैं भी उनका अनुसरण करने लगा।

किशोर बाबू के हाथ में बिजली का एक लैम्प था। उसे उन्होंने जलाया। इसलिए ऊपर से मैं वहाँ की सारी व्यवस्था स्पष्ट से देख रहा था। इधर उन लोगों को इस बात का सन्देह ही नहीं था कि कोई हमारी यह कारसाजी देख रहा होगा। इससे वे सब निश्चिन्त थे।

सुनील और खांडेकर से विदा होकर—तुलसी महल की ओर चला। बाग से निकलकर वह महल में प्रवेश करने को ही था कि सफेद वस्त्र पहने और बाल खोलकर पीठ पर लटकाये हुए दीर्घ आकृति की एक रमणी की मूर्त्ति दिखाई पड़ी। वह मूर्त्ति तुलसी की ही ओर बढ़ती आ रही थी। उसकी ओर दृष्टि जाते ही तुलसी इतना अधिक भयभीत हुआ कि आगे की ओर पैर बढ़ाने का उसे सासह ही नहीं हो रहा था।

थोड़ी देर में ही साहस का संचय करके तुलसी वृक्ष के पास चला गया और तने से लिपटकर खड़ा रहा। उसी वृक्ष के पास से होकर जाते-जाते उस रमणी-मूर्त्ति ने एक लम्बी साँस ली और निराशा-पूर्ण

एवं मन्द स्वर में वह बोली—ओह ! पाप की बात छिपा रखने में कितना असह्य क्लेश होता है !

तुलसी के कान में यह बात पड़ गई। बाद को उसने पहचाना कि यह रमणी स्वयं गृहस्वामिनी अन्नपूर्णा हैं। उनके मुँह से यह बात सुन-कर तुलसी यह जानने के लिए बहुत उत्कण्ठित हो उठा कि इन्होंने कौन-सी पाप की बात छिपा रक्खी है। अन्त में अन्नपूर्णा के जाने के बाद तुलसी भी गया और वह चुपके से अपने बिस्तरे पर लेट गया। दुश्चिन्ता के मारे उस रात्रि में उसे निद्रा नहीं आ सकी।

२०

तुलसी ने निश्चय किया था कि उजाला होने से पहले ही खाडेकर के पास जाकर मैं उसे इस घटना की सूचना दे आऊँगा। परन्तु रात्रि में निद्रा न आ सकने के कारण उषाकाल में उसे बहुत ही गम्भीर निद्रा आ गई। रामू ने जिस समय उसे जगाया उस समय काफी दिन चढ़ आया था। उठते ही वह मालिक के लिए चाय तैयार करने में लग गया। बड़ी उतावली के साथ हर एक काम करने के बाद नौ बजे तक उसे बड़ी कठिनाई से अवकाश मिल सका। तब वह दौड़ता हुआ सुनील के घर पहुंचा।

गत रात्रि की घटना का विवरण सुनकर खांडेकर ने कहा—अपने अनुसन्धान के द्वारा चित्रगुप्त बाबू के अदृश्य होने का हाल मालूम करने में यदि हम समर्थ न हो सकेंगे तो अपने आप कोई बात प्रकट न हो सकेगी।

इन लोगों में ये बातें हो ही रही थीं, इतने में तार-घर का एक चपरासी आया और उसने बाबू सुनील के नाम के तार का एक लिफाफा दिया। बहुत ही उत्कण्ठित होकर सुनील ने लिफाफे को खोला। वह तार सुनीता का भेजा हुआ था। उसने लिखा था—आप अपने मित्र को अब वहाँ खोजने का उद्योग न कीजिएगा। वे मुझे दिखाई पड़ गये हैं। इसके बाद की ही गाड़ी से मैं कलकत्ते आ रही हूँ। स्टेशन पर आइएगा।

तार पढ़कर सुनील ने खांडेकर तथा तुलसी को यह संवाद सुनाया। इस संवाद से वह स्वयं बहुत ही चकित हो उठा था और इस बात की सत्यता पर विश्वास करने की उसकी इच्छा नहीं हो रही थी। परन्तु मित्र के जीवित अवस्था में होने का समाचार पाकर वह अत्यन्त ही

आनन्दित हो उठा था। उसने सोचा कि अब शीघ्र ही उससे मुलाकात हो जायगी और उसके इस प्रकार अदृश्य हो जाने का रहस्य भी उद्घाटित हो जायगा।

सुनील उस तार को कई बार पढ़ने के बाद भी निश्चित नहीं हो सका। उसने मन ही मन कहा—कहीं कल्पना के आवेग के कारण सुनीता को दृष्टि-विभ्रम तो नहीं हो उठा? स्त्रियाँ बहुधा प्रत्यक्ष में अनुमान का भी बहुत कुछ सम्मिश्रण कर देती हैं। इसलिए उनकी बातें सर्वथा विश्वास के ही योग्य नहीं हुआ करतीं।

सुनील प्लेटफार्म पर टहल रहा था। गाड़ी आते ही सुनीता को खिड़की से झाँकती हुई देखकर वह प्रसन्न हो उठा। दोनों ही ने मुस्कराते हुए एक दूसरे को नमस्कार किया। रुकती हुई गाड़ी के साथ ही साथ बढ़कर उसने खिड़की खोली। सुनीता से मित्र का समाचार प्राप्त करने के लिए वह उत्कण्ठित तो था ही; परन्तु सुनीता की ओर से उस विषय में कोई वैसा आग्रह न देखकर सुनील और भी अधीर हो उठा।

सुनीता गाड़ी से उतरी। परन्तु उसकी अवस्था देखकर सुनील एका-एक उससे कुछ पूछने का साहस नहीं कर सका। सुनीता का मुख सूख-कर कांतिहीन हो उठा था। आँखों की पलकें आँसुओं से भीगी हुई थीं।

सुनील उत्कंठित-भाव से सुनीता की ओर ताक रहा था। भीतर से उठती हुई रुलाई को रोकने का उद्योग-सा करती हुई हाँफती-हाँफती वह बोली—मैंने उन्हें देखा है।

"किसको? चित्रगुप्त को? कहाँ देखा है आपने उसे?"

बड़ी कठिनाई से अपने आपको सँभालकर सुनीता ने कहा—स्टेशन से बाहर चलिए, तो बतलाती हूं सारी बातें।

सुनीता ने अपने आने की सूचना महल में नहीं भेजी थी इसलिए वहाँ से सवारी नहीं आई थी।

सुनील और सुनीता पास-पास चल रहे थे। पीछे एक कुली था;

जो सुनीता का सामान लिए हुए था। कुछ दूर तक चलने के बाद एक लम्बी साँस लेकर सुनीता बोली—मैं उन्हें एक रेलवे स्टेशन के प्लेट-फार्म पर देख आई हूँ। एक सुन्दरी तरुणी का हाथ पकड़े हुए वे खूब हँस-हँसकर बातें कर रहे थे। कितने निष्ठुर हैं वे! कितने हृदयहीन हैं?

आश्चर्य में आकर सुनील ने पूछा—रेलवे स्टेशन पर देखा है आपने? चित्रगुप्त को? किस स्टेशन पर देखा है?

"मैं डाकगाड़ी से आ रही थी। रास्ते में किसी छोटे स्टेशन के प्लेट-फार्म पर मैंने उन्हें देखा है? हमारी गाड़ी उस स्टेशन पर खड़ी नहीं हुई। प्लेटफार्म पर उनकी ओर दृष्टि जाते ही वह एकदम से उन्हीं की ओर आबद्ध हो गई थी, इससे वह देखने का अवसर ही नहीं मिला कि वह स्टेशन कौन-सा था। उन्हें उस अवस्था में देखकर मैं विह्वल हो उठी थी। उस स्टेशन पर वे सम्भवतः गाड़ी की ही प्रतीक्षा में खड़े थे। वहाँ से वे अवश्य कहीं चले गए होंगे।"

"आपने ठीक-ठीक देखा है न? चित्रगुप्त ही थे न वे! भ्रम तो नहीं हो गया आपको?"

सुनीता की इस बात में कितना अनुराग; कितना प्रणय व्यक्त हो रहा था! चित्रगुप्त के प्रति उसका इतना अगाध प्रेम देखकर सुनील ने बहुत सन्तोष का अनुभव किया। सुनीता की मनोवेदना से व्यथित होकर उसने कहा—किन्तु गाड़ी तेजी के साथ चली आ रही थी और बात की बात में प्लेटफार्म को पीछे छोड़कर चली आई होगी, इससे आपकी दृष्टि विभ्रम हो जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

खूब जोर से मस्तक हिलाकर दृढ़तापूर्वक सुनीता ने कहा—पहचा-नने में मुझसे जरा-सी भी भूल नहीं हुई है। मैंने उन्हीं को देखा है।

सुनीता की इस दृढ़तापूर्ण बात से सुनील ने बहुत ही आनन्द का अनुभव किया। उसे निश्चय हो गया कि चित्रगुप्त जीवित है और सुखपूर्वक विचरण कर रहा है। उसे जीवित देखकर सुनीता को भी सुखी होना चाहिए था; परन्तु हाय रे नारी-चरित्र, जिस प्रियतम के संबंध

में वह निश्चय कर चुकी थी कि उसकी मृत्यु हो गई है, उसी को जीवित अवस्था में देखकर उसने जब यह अनुभव किया कि यह किसी दूसरी स्त्री के प्रति आसक्त हो उठा है, तब हृदय उसका ईर्ष्या से लबालब भर उठा। मन में यह बात आते ही कौतुक का अनुभव करते हुए उसने पूछा—चित्रगुप्त के साथ जो स्त्री दिखाई पड़ी थी, वह किस प्रान्त की-सी जान पड़ती थी ?

"वह या तो बंगालिन होगी या गुजरातिन होगी। इन दोनों प्रान्तों की शिक्षित रमणियों के पहनावे में तो साधारण-सा अन्तर है, उसकी ओर ध्यान देने का अवसर मुझे नहीं मिल सका।"

"क्या उन लोगों के साथ में कोई और भी था ?"

"यह मैं नहीं बतला सकती। मैं केवल इतना ही देख सकी हूँ कि एक सुन्दरी युवती का हाथ पकड़े हुए वे हँस-हँसकर बातें कर रहे हैं।"

सुनील ने कहा—आप इस सम्बन्ध में अभी किसी से कुछ कहिएगा नहीं; मैं खांडेकर साहब से परामर्श करूँगा कि इस विषय में क्या किया जा सकता है ?

बातें करते-करते लोग महल के पास पहुँच गये। किसी प्रकार की सूचना दिये बिना ही सुनीता को आई देखकर चन्द्रगुप्त बाबू और अन्नपूर्णा को कुछ आश्चर्य हुआ अवश्य, किन्तु उन्होंने अनुमान यही किया कि चित्रगुप्त का कोई पता चल सका है या नहीं, यही बात जानने के लिए यह आई होगी।

सुनील के मुंह से सुनीता की यह बात सुनकर खांडेकर ने अवज्ञा के स्वर में कहा—यह सब एक रमणी के हृदय की भ्रान्त कल्पना के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । तो भी उन सब स्टेशनों पर एक आदमी को भेज कर पता लगाने का प्रयत्न करूँगा । परन्तु इतने बड़े रहस्य के अनुसंधान के लिए उद्योग हमें महल में ही करना होगा ।

सुनीता की इस बात के कारण सुनील बड़ी दुविधा में पड़ गया था । वह सोच रहा था कि सुनीता ने यदि सचमुच चित्रगुप्त को देखा है तो उसकी खोज के लिए मुझे उन सब स्थानों में जाना चाहिए । परन्तु यदि भ्रान्त कल्पना के कारण यह बात कह रही हो तो यहाँ से इतनी दूर तक जाना किसी प्रकार भी युक्ति-संगत न होगा । बहुत सोच-विचार करने के बाद उसने निश्चय किया कि खांडेकर के कथन के अनुसार महल में एक बार और खोज करके सुनीता की बातों की सत्यता की परीक्षा करने के लिए निकलूँगा ।

खांडेकर और सुनील ने जाकर चन्द्रगुप्त बाबू से जब प्रस्ताव किया कि महल के गुप्त रास्तों को हम लोग एक बार और ध्यानपूर्वक देखना चाहते हैं, तब निराशामिश्रित अवज्ञा के स्वर में उन्होंने कहा—तुम्हारी जो इच्छा हो, वह करो ।

चन्द्रगुप्त बाबू की आज्ञा पाते ही वे दोनों आदमी महल के भीतर की उस पतली-सी गली में, जिसके दोनों ओर छोटे-छोटे कमरे बने थे, पहुंच गए । गली का जहाँ पर अन्त हुआ था, वहाँ दीवार पर कुछ लिखा था । वह लेख देखने के विचार से चित्रगुप्त पिता के पास से चला था और उसके बाद से ही उसका पता नहीं चल सका । इसलिए उन दोनों आद-

मियों ने पहले-पहल जाकर उस लेख की ही परीक्षा करने का निश्चय किया।

महल के भीतर की पतली गली में प्रवेश करते समय खांडेकर ने उस गली में प्रवेश करने के द्वार को बन्द कर लिया था। इससे एकान्त भंग होने की आशंका उन्हें नहीं रह गई थी और वे निश्चिन्त भाव से अपने कार्य में संलग्न थे। जहाँ पर दीवार पर कुछ लिखा था उसके नीचे दीवार में ही एक चौकोर पत्थर बैठाला हुआ था। उस चौकोर पत्थर के मध्य भाग में लोहे के कुलाबे में एक बहुत ही मजबूत हुक लगा हुआ था। पत्थर में उस हुक की नाप की ही एक खड्ड बनी हुई थी, जिससे कि वह उसमें लगाया जा सके। खूब ध्यान से देखकर खांडेकर ने मालूम किया कि यह हुक पहले चूना और सुर्खी से इसी खड्ड में बैठाला हुआ था, हाल में किसी ने चूना और सुर्खी हटाकर हुक को खड्ड से निकाल दिया है।

यह लेख, पत्थर में बनाई गई खड्ड तथा उसमें लगा हुआ हुक आदि सुनील पहले ही देख चुका था। परन्तु खुफिया-विभाग के अनुभवी कर्मचारी खांडेकर के समान ही उसमें भी तो इन सबकी उपयोगिता का मूल्यय आँकने की शक्ति थी नहीं। इससे वह इस सम्बन्ध में किसी प्रकार का अनुमान नहीं कर सका था। यही कारण है कि खांडेकर ने जब बतलाया कि यह हुक सम्भवतः अभी हाल में निकाला गया है, तब सुनील चकित हो उठा।

सुनील बहुत ही उत्सुकभाव से खांडेकर की ओर ताक रहा था। उपर्युक्त लेख को एक बार पढ़ लेने के बाद खांडेकर ने पाकेट से एक खूब बड़ा-सा लेन्स निकाला और उसे पत्थर के आस-पास दीवार पर फेर-फेरकर आतसी शीशे पर तीक्ष्ण दृष्टि रखते हुए रहस्य के सूत्र का अनुसन्धान करते-करते उसने कहा—इस लेख से ज्ञात हुआ कि जिन लोगों के सम्बन्ध में देश-द्रोही होने का सन्देह होता, उन्हें बन्दी करके इस महल में जीवित अवस्था में ही समाधिस्थ कर दिया जाता था।

यहीं कहीं कोई अन्धकूप होगा । अन्धकूप का मुखोद्घाटन करने की कुँजी शायद यह लोहे का हुक ही.........।

बहुत ही सावधानी के साथ परीक्षा करने के बाद खांडेकर ने वह हुक घुमाना आरम्भ किया । उसे घुमाते ही दीवार में जड़ा हुआ पत्थर खट से खुल गया और वह धीरे-धीरे खिसकने लगा । उसे इस प्रकार खिसकता देखकर सुनील तो भयभीत होकर कई कदम पीछे हट गया । इधर देखते ही देखते दरवाजा बिल्कुल खुल गया और एक अन्धकारमय गह्वर-सा दिखाई पड़ने लगा । झांककर देखने पर अन्धकारमय गह्वर में अस्पष्ट रूप से एक सीढ़ी भी दिखाई पड़ी । अब सुनील का साहस बढ़ा । और भी झुककर ध्यानपूर्वक देखने के बाद उसने मालूम किया कि सीढ़ी लकड़ी की है और काफी मजबूत है ।

सुनील के आग्रह से खांडेकर ने अपना बिजली का लैम्प जलाया और दोनों ने यह इच्छा की कि इस गह्वर को खूब ध्यानपूर्वक देखना चाहिए । इतने में उन्हें ऐसा मालूम पड़ा कि मानो यह दरवाजा अपने आप बन्द हुआ जा रहा है ।

अत्यन्त ही विस्मित होकर सुनील कहा—यह दरवाजा ऐसे विचित्र ढंग से बना हुआ है कि इसमें जो बड़े-बड़े पत्थर लगे हुए हैं, वे सदा ही एक दूसरे से भिड़कर दरवाजे को बन्द कर देने के प्रयत्न में रहते हैं । केवल हुक को घुमाकर जब उसे खोलने का उद्योग किया जाता है, तभी शायद किसी स्प्रिंग के घूमने के कारण दरवाजा एकदम से खुल जाता है, बाद को वह अपने आप ही फिर बन्द हो जाता है ।

सुनील और खांडेकर आपस में इस प्रकार की बातें कर ही रहे थे, इतने में दरवाजे के दोनों पत्थर अपने आप भिड़ गए और सांकल भी बन्द हो गई । उन लोगों ने पत्थरों को ठेलकर देखा । परन्तु केवल धक्का देकर इतने भारी पत्थरों का उठाना सम्भव न हुआ । अब सुनील ने हुक को पकड़कर ताले की कुंजी की तरह उसे फिर दाहिनी ओर घुमाया । ऐसा करने पर तुरन्त ही खट से दोनों ओर के पत्थर एक

दूसरे से अलग हुए और गह्वर का द्वार क्रमशः खुलने लगा।

अब सुनील ने कहा—पत्थर पर खुदा हुआ यह लेख पढ़ने के विचार से आकर चित्रगुप्त ने अवश्य इस हुक को घुमाया होगा और द्वार खुलने पर कौतूहलवश वह इस गह्वर में अवश्य प्रविष्ट हुआ होगा। अन्त में एकाएक द्वार बन्द हो जाने पर इस अन्धकूप में बन्दी होकर रह जाने के सिवा उसके लिए और कोई उपाय ही नहीं रह गया था। अन्त में चित्रगुप्त को खोज निकालने के विचार से सुनील ने बिजली का लैम्प लेकर अन्धकूप में प्रवेश करने का निश्चय किया। खांडेकर से उसने कहा कि आप तब तक यहीं रहियेगा और आवश्यकता पड़ने पर द्वार खोल दीजिएगा।

गह्वर के भीतर बिजली के लैम्प की रोशनी डालकर सुनील ने जैसे ही सीढ़ी पर पैर रक्खा, वैसे ही वह सामने की ओर लुढ़क पड़ा। उसके पैर के नीचे से सीढ़ी का डंडा भन से घूमकर हट गया। खांडेकर ने सामने की ओर हाथ बढ़ाकर उसे पकड़ने का उद्योग किया अवश्य; किन्तु इससे पहले वह झलमलाकर अन्धकार में अदृश्य हो गया। साथ ही साथ उस अन्धकूप का द्वार भी बन्द हो गया। खांडेकर भय और विस्मय से अभिभूत होकर क्षण भर स्तम्भित सा खड़ा रहा। बाद को साहस करके उस गली का द्वार खोलकर वह बाहर निकला और तुलसी को देखकर उसे साथ लिए हुए वह फिर अन्धकूप के पास पहुँचा। तब उसने लोहे के उस हुक को ऐंठकर दो बड़े-बड़े अखण्ड पत्थरों का कपाट खोला। कपाट खुल जाने पर उस भयंकर अन्धकूप की ओर ताककर तुलसी ने पूछा—सुनील बाबू कहाँ हैं?

खांडेकर ने कहा—इसी अन्धकूप में वे गिरे हुये हैं। उन्हें देखने के लिए मैं इसमें उतरूँगा। यह दरवाजा अभी ही बन्द हो जाएगा, तुम यह हुक पकड़कर दाहिनी ओर ऐंठ देना तब फिर खुल जायगा। इस प्रकार जब-जब दरवाजा बन्द हो जाय तब-तब इस हुक को ऐंठकर तुम इसे खोलते जाना। परन्तु पहले एक मोटी-सी रस्सी और एक लालटेन

जलाकर ले आओ। रस्सी के सहारे से कुएँ में उतरना होगा। इसके भीतर जो सीढ़ी-सी दिखाई पड़ रही है वह वास्तव में सँकरे से बँधी हुई एक चर्खी है। उस पर पैर रखते ही सुनील बाबू घुमुण्डी खाकर गिर पड़े।

इतनी देर में सुनील भी बहुत-कुछ शान्त हो गया था और इतने ऊँचे से एकाएक गिरने के कारण भय और चोट के मारे उसे जो मूर्च्छा आ गई थी वह शान्त हो चुकी थी। इससे उसने चिल्लाकर पुकारा—खांडेकर साहब, आप मेरे लिए चिन्ता न कीजिएगा। मैं बहुत अच्छी तरह से हूं। आप भी चले आइए, किन्तु किसी रस्सी के सहारे से नीचे उतरिएगा।

सुनील के कण्ठ-स्वर से खांडेकर और तुलसी ने यह अनुभव कर लिया कि वह काफी स्वस्थ अवस्था में है, साथ ही उसके मन में किसी प्रकार का उद्वेग भी नहीं है। इससे उन दोनों की व्यग्रता जाती रही। अन्त में जरा देर के बाद ही एक मोटी-सी रस्सी से सहारे से खांडेकर नीचे उतर गया। साथ में वह एक लालटेन और दो लट्ठ लिए हुए था।

कूप में प्रवेश करने के लिए सीढ़ी के भ्रम से चर्खी पर पैर रखते ही सुनील जब गिरा था तब बिजली का लैम्प उसके हाथ से छूट गया था अन्धकार के कारण अभी तक सुनील उसे पा नहीं सका था। उजाला होते ही वह उसे मिल गया। अब दोनों ही आदमियों ने बायें हाथ में लैम्प और दाहिने हाथ में लट्ठ ले-लेकर आगे बढ़ना आरम्भ किया। पैर आगे बढ़ाने से पहले लट्ठ से ठोंक-ठोंककर वे देख लिया करते थे कि जमीन ठोस है या नहीं?

जरा ही दूर तक बढ़ने के बाद खांडेकर और सुनील ने देखा कि सुरंग बाईं ओर घूम गई है और सामने की ओर पत्थर की दीवार में दो बड़े-बड़े छेद हैं, जिनमें से होकर पानी की धारा निकल रही है।

बहुत ही सावधानी के साथ पैर उठा-उठाकर रखते हुए वे दोनों बाईं ओर मुड़े। उस ओर सुरंग क्रमशः संकीर्ण और ढालू हो गई थी।

उधर जल धारा भी क्रमशः अधिक तीव्र वेग से बह रही थी। दीवार में पंक्ति के पंक्ति छेद थे, जिनसे होकर जल की धारायें निकाल रही थीं और सुरंग के बीच से होकर बहती हुई धारा के वेग को क्रमशः बढ़ा रही थीं।

एकाएक सामने की ओर झुककर खांडेकर ने भूमि पर से कोई चीज उठा ली। लालटेन के बिल्कुल सामने लाकर देखने के बाद उसने कहा—यहाँ मनुष्य के आगमन का चिह्न स्वरूप एक पत्र प्राप्त हुआ है। परन्तु कीचड़ में यह इस प्रकार सन गया है कि एक अक्षर भी पढ़ा नहीं जाता।

बहुत ही उत्कण्ठित होकर सुनील ने कहा—पानी में चीचड़ धोकर तो जरा देखो!

खांडेकर ने वैसा ही किया। जल की धारा में उस चिट्ठी को उसने डुबो दिया, जिससे उसमें लगा हुआ सारा कीचड़ साफ हो गया। तब बिजली के लैम्प के सामने करके वह उसे खूब ध्यान से देखने लगा। जरा देर तक उस पर दृष्टि दौड़ाने के बाद उसने सुनील से कहा—यह पत्र बँगला में लिखा हुआ है परन्तु अन्त में किये गये हस्ताक्षर के अतिरिक्त और कुछ पढ़ने योग्य नहीं रह गया है। जरा आप तो देखिए इसे, कुछ पढ़ा जाता है या नहीं।

सुनील की दृष्टि पहले से ही पत्र पर लगी हुई थी। अब वह उस पर एकदम से झुक पड़ा और ध्यानपूर्वक देखने के बाद बोला—केवल अन्त के दो अक्षर पढ़े जाते हैं—'ललिता'। बहुत सम्भव है कि यह पत्र लता का ही हो।

खूब सावधानी के साथ तहाकर खांडेकर ने पत्र को पाकेट में रख लिया। उसने कहा—इसे सुखाकर दिन के प्रकाश में देखना होगा। सम्भव है कि इसके द्वारा और भी कोई बात मालूम की जा सके।

लट्ठ से भूमि को ठोंकते-ठोंकते हाथ में लालटेन लिए हुए वे दोनों और भी [आगे की ओर बढ़ गये। जरा दूर तक बढ़ने के बाद सुनील की

दृष्टि और भी एक कागज पर पडी । उसने उसे झटपट उठा लिया । वह स्वयं सुनील का भेजा हुआ पत्र था और वही पत्र था जिसके द्वारा उसने अपने कलकत्ता आने की सूचना दी थी । वह पत्र देखते ही सुनील बोल उठा कि अब चित्रगुप्त के यहाँ आने के सम्बन्ध से कोई सन्देह नहीं रह गया है और यहाँ से निकलने के लिए यदि कोई दूसरा मार्ग नहीं है तो शीघ्र ही वह हमें जीवित या मृत अवस्था में मिल जायगा ।

बातें करते-करते सुनील और खांडेकर आगे की ही ओर बढ़ते गये । चारों ओर बिजली की रोशनी फैला-फैलाकर खूब सावधानी के साथ वे दोनों देखते जा रहे थे । जरा दूर बढने के बाद एक नोटबुक मिला, बाद को एक पेंसिल मिली, उससे जरा-सा और आगे बढ़ने पर कुंजियों का एक गुच्छा मिला । इन सब चीजों को उठाकर खांडेकर ने अपने पाकेट में रख लिया और बहुत ही ध्यानपूर्वक नीचे की ओर ताकते-ताकते सुरंग के पंकमय मार्ग में वह चित्रगुप्त के पद-चिह्नों का अनुसरण करने लगा । इससे उन दोनो ने अनुभव किया कि अन्धकारमय सुरंग में मार्ग खोजने के लिए चित्रगुप्त जैसे-जैसे छटपटा-छटपटाकर भटकता रहा है, वैसे ही वैसे उसके पद चिह्न बने हुए हैं ।

कुछ दूर तक और बढ़ने पर उन दोनों ने देखा कि सुरंग का सारा रास्ता जल से भर गया है और जल की धारा तीव्र वेग से प्रवाहित हो रही है । सुनील ने वहाँ पर लट्ठ डुबाकर देखा कि जल यहाँ पर बहुत गहरा है । उस जल की धारा के अतिरिक्त और कोई मार्ग भी नहीं था । जल की धारा और दीवार के बीच में केवल बालिस्त भर का चौड़ा रास्ता दिखाई पड़ा । उसी पर पैर रखकर दीवार के सहारे से लट्ठ टेकते-टेकते वे दोनों बहुत ही सँभाल-सँभालकर चलने लगे । इस प्रकार दस-बारह हाथ का रास्ता तय करने के बाद उन्होंने देखा कि एक स्थान पर दीवार तोड़कर जल की धारा बहुत ही वेग से घूमकर बाहर निकल गई है और वहाँ इतने जोर का भँवर है कि उसे पार करना शायद बड़े से बड़े तैराक के लिए भी सम्भव न हो सकेगा ।

वहाँ से सुरंग दाहिनी ओर घूमी हुई थी और जल की धारा तथा सुरंग जहाँ एक दूसरी से पृथक् हुई हैं, उस स्थान से आगे बढ़ने पर मार्ग की भूमि सूखी हुई थी। इस मार्ग में बहुत ही ध्यानपूर्वक देखने पर भी किसी प्रकार का पद चिह्न नहीं दिखाई पड़ रहा था। जरा दूर तक और बढ़ने के बाद टेढ़ी मेढ़ी सुरंग के एक मोड़ पर घूमते ही एकाएक सूर्य्य का प्रकाश दिखाई पड़ने लगा। समीप ही एक स्थान पर छत गिर पड़ी थी। उसके ऊपर पेड़ की एक डाली लटक रही थी। किसी प्रकार ऊपर चढ़कर उसी डाली की सहायता से सुनील बाहर निकला। खांडेकर ने भी उसका अनुसरण किया।

इस बात का तो उन दोनों ही को विश्वास हो गया था कि चित्रगुप्त इस सुरंग में अवश्य आया था। परन्तु यहाँ उसके आने का क्या कारण हो सकता है और यहाँ से वह कहाँ गया होगा, इस विषय में वे दोनों एकमत न हो सके। अन्त में तरह-तरह का तर्क-वितर्क करते हुए वे महल में पहुंचे। सुनील और खांडेकर के मुँह से सारा वृत्तान्त सुनकर चन्द्रगुप्त बाबू बड़े ही आश्चर्य में पड़ गये। पहले उन्होंने ये बातें अविश्वास के ही साथ सुनी थीं और इन्हें वे उपेक्षापूर्वक टाल देना चाहते थे। परन्तु उन दोनों ने साथ में ले जाकर जब उन्हें वह अन्धकूप दिखलाया और सुरंग में जो-जो चीजें मिली थीं, वे सब दिखलाई तब वे बहुत ही विस्मित हुए।

अब एक बार चन्द्रगुप्त बाबू के मन में भी यह बात आई कि सम्भवतः लता की हत्या करके चित्रगुप्त भाग गया है और जैसी कि सुनीता की धारणा है, कहीं वह छिपा हुआ है। किन्तु यह बात किसी प्रकार भी उनके मन में नहीं बैठ पाती थी कि चित्रगुप्त जैसा सदाचारी आदमी इस प्रकार के पाप कर्म की ओर प्रवृत्त हो सकता है। अन्त में खांडेकर की इस बात का उन्होंने भी समर्थन किया कि सुरंग का अवशिष्ट अंश भी खोज कर देखना चाहिए, घर के समस्त आदमियों को लगाकर बाग साफ करवाया जा सकता है।

२२

चित्रगुप्त का जब कोई भी पता न चल सका तब खांडेकर ने चन्द्रगुप्त बाबू से कहा कि चित्रगुप्त बाबू के घर से निकल भागने में अब कोई सन्देह नहीं रह गया है। अनुमान से उनके निकल भागने के जो कारण मालूम पड़ रहे हैं, उनकी पुष्टि के लिए प्रमाण संग्रह करना आवश्यक है। इसलिए सुनीता ने जिस ओर चित्रगुप्त को देखा है, उसी ओर मैं जा रहा हूँ, सुनील बाबू यहीं रहकर जाँच-पड़ताल करेंगे।

चन्द्रगुप्त के द्वारा अन्नपूर्णा के सम्बन्ध में ज्ञात हुआ कि आजकल वे ज्वर से बहुत अधिक पीड़ित हैं और रह-रहकर अंट-संट बकने लगती हैं। इससे खांडेकर ने सुनील से कहा कि उनके मुँह से जो कोई भी अंट-संट बात निकले उसे खूब ध्यानपूर्वक सुनकर आप लोग नोट करते जाइएगा, बाद को वह सब जोड़-तोड़कर कोई ऐसा अर्थ निकाल लेना कदाचित् असम्भव न होगा जिसके द्वारा रहस्य पर प्रकाश पड़ सके।

खांडेकर के मुँह से इस प्रकार की बात सुनकर चन्द्रगुप्त पहले मन ही मन क्रुद्ध हो उठे थे। उनकी धारणा थी कि भला ऐसी कौन सी गोपनीय बात हो सकती है जो वे मुझसे छिपा रखने की इच्छा कर सकें। उनके प्रति किसी प्रकार का सन्देह का भाव प्रकट करना बहुत ही अनुचित है। परन्तु बाद को अन्नपूर्णा के मुँह से निकली हुई अर्थहीन बातों पर जरा सा ध्यानपूर्वक विचार करते ही उनकी बुद्धि चक्कर में आ गई। अन्नपूर्णा झोंक में आकर जो अर्थहीन बातें मुँह से निकालती थीं, उनमें लता चित्रगुप्त और किशोर के नाम आये बिना नहीं रहते थे। एक बार उनके मुँह से निकला—चित्रगुप्त के साथ लता का विवाह हो जाने पर सुनीता के साथ किशोर का विवाह होने में कोई

बाधा न रहेगी । दूसरी बार फिर उनके मुँह से निकला—नहीं, नहीं, किशोर का विवाह लता के साथ करना होगा, क्योंकि चित्रगुप्त और सुनीता का विवाह किसी प्रकार भी रोका नहीं जा सकता ।

उपर्युक्त बातों पर विचार करते ही चन्द्रगुप्त का हृदय सन्देह से पूर्ण हो उठा । वे इन वाक्यों के तरह-तरह के अर्थ लगाने लगे । परन्तु उनमें से कोई भी अर्थ मन में ठीक से जमता नहीं था । इस कारण चिन्ता के मारे वे बहुत ही अधीर हो उठे थे । इतने में डाक्टर ने आकर अन्नपूर्णा के रोग की परीक्षा की । आज उन्होंने दवा बदल दी और कहा कि रोगिणी की अवस्था बहुत ही चिन्ताजनक है ।

डाक्टर को गाड़ी पर बैठालकर चन्द्रगुप्त रोगिणी के कमरे में फिर लौट गये । कौशल्या उस समय शीशे की एक नन्हीं सी कटोरी में कोई चीज लेकर उन्हें पिलाने का प्रयत्न कर रही थी । परन्तु वे उसे किसी प्रकार भी नहीं पीना चाहती थीं, रह-रहकर प्रलाप करती थीं ।

कौशल्या से चन्द्रगुप्त ने काँच की कटोरी ले ली । पत्नी के मुँह के सामने झुककर स्नेहमय स्वर में वे बोले—क्या जरा सा जल पीओगी ?

अन्नपूर्णा उत्तेजित स्वर में बोल उठीं—नहीं, नहीं, वह दवा मुझे न खिलाइएगा । ....मैंने लता को खिलाई थी वह दवा, परन्तु उसका इस प्रकार का प्रभाव होगा, इस बात की आशा नहीं की थी मैंने । इसे खाने पर मैं भी मर जाऊँगी ।

चन्द्रगुप्त का हृदय संदेह से पूर्ण हो उठा । तो भी स्नेहमयस्वर में ही वे बोले—यह दवा नहीं है, पानी है ।

अन्नपूर्णा चिल्ला उठीं—विष है ! यही विष खाकर मरी है वह लड़की ।.........मैंने यही समझकर दिया था उसे कि इससे लाभ होगा । ......मैंने यह नहीं समझा था कि इसे खाकर मर जायगी !

चन्द्रगुप्त और भी आश्चर्य में आ गये । समीप ही सन्नाटे में आकर मुँह सुखाये हुए कौशल्या खड़ी थी । उसकी ओर उन्होंने एक बार ध्यान से ताका । बाद को अत्यन्त ही उत्कण्ठामय स्वर में वे बोले—विष की

बात तुम क्यों कर रही हो ? यह जल है !

अविश्वास की हँसी की एक पतली सी रेखा होंठ के कोने में छिपाये हुए अन्नपूर्णा ने कहा—मैंने भी उस लड़की को चाय के बहाने से विष दिया था ! तुम्हें मेरे पाप कर्म का पता चल गया है ! इसीलिए तुम मुझे मारने आये हो ? मुझे क्षमा करो, मेरी रक्षा करो, मुझसे मरा न जायगा !

भयभीत होकर अन्नपूर्णा ने तकिया में मुँह छिपा लिया। तब चन्द्रगुप्त ने कौशल्या को आदेश किया कि किसी प्रकार एक खुराक दवा इन्हें पिला दो। परन्तु यह बात सुनते ही अन्नपूर्णा चिल्ला उठीं—यही राक्षसी तो सारे अनर्थों का कारण है। इसी ने लता को मारने के लिए लाकर दिया था। आज यही मुझे मारने के लिए भी विष ले आई है।

तीक्ष्ण दृष्टि से कौशल्या की ओर ताकते हुए चन्द्रगुप्त ने पूछा—यह सब ये क्या कह रही हैं ?

भय के कारण सूखे हुए मुख कौशल्या ने कहा—मुझे तो कुछ मालूम नहीं है सरकार ! बेहोशी की हालत में ये केवल यही बात बक रही है। मैंने लता को दवा नहीं खिलाई है। माली के यहाँ छोटे साहब ने स्वयं चाय के साथ उन्हें दवा दी थी।

अन्नपूर्णा अपनी धुन में बकती ही गई—चित्रगुप्त को मैंने गर्भ में नहीं धारण किया। परन्तु फिर भी वह मेरा लड़का है। बड़ा लड़का है। उसे मालूम हो गया था कि किशोर के साथ लता की घनिष्ठता पराकाष्ठा तक पहुँच गई। उसने उन दोनों का विवाह कर देने का परामर्श दिया था, परन्तु तुम्हारे भय से मैंने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया। इसीलिए माँ होकर मैंने राजदण्ड और लोकापवाद से एक लड़के की रक्षा करने के लिए उसका अपराध दूसरे लड़के के मत्थे मढ़ दिया है। बच्चे ने मेरे लज्जा, क्षोभ और प्राण-भय के कारण देश-निर्वासन स्वीकार कर लिया है। परन्तु धन्य है उसकी गम्भीरता कि इतने पर भी उसने माता और भाई का कलंक प्रकट नहीं किया।

अपनी ही धुन में बड़बड़ाती हुई अन्नपूर्णा और न जाने क्या-क्या कह गईं। उन सब को जोड़-तोड़कर चन्द्रगुप्त ने अर्थ निकाला कि चित्रगुप्त को लता के साथ घनिष्ठता बढ़ाते देखकर उन्हें ईर्ष्या हुई। उनकी आंतरिक आकांक्षा थी कि सुनीता का विवाह किशोर के ही साथ हो। इसी मतलब से उन्होंने लाकर लता को भिड़ाया था और प्रयत्न किया था कि चित्रगुप्त के साथ उसकी घनिष्ठता हो जाय जिससे कि सुनीता के साथ उसके विवाह का जो निश्चय हुआ है, वह भंग हो जाय। परन्तु अपने निर्मल चरित्र के कारण चित्रगुप्त उससे दूर हो रहा। इधर जो जाल उन्होंने फैलाया था चित्रगुप्त को फँसाने के लिए उसमें फँस गया किशोर। अन्त में अन्नपूर्णा और किशोर ने मिलकर कौशल्या की शरण ली। उसने विष ले आ दिया, जिसकी सहायता से उन माता पुत्र ने नारी-हत्या तथा भ्रूण-हत्या जैसे अत्यन्त गर्हित कार्यों का सम्पादन किया। उधर चित्रगुप्त के अदृश्य होते ही इन सब लोगों ने परामर्श करके यह अपराध उसी के मत्थे मढ़ने का निश्चय किया। रात्रि में कौशल्या और रामू ने गुप्त मार्ग से लता का शव ले आकर चित्रगुप्त के कमरे में उसी के सन्दूक में बन्द कर दिया था।

आज अन्नपूर्णा के प्रलाप का अन्त ही नहीं हो रहा था। वे कह रही थीं—कौशल्या को तुम डाँटना नहीं। वह बड़ी ही चतुर है। उसी ने तो मुझे इतनी बुद्धि दी थी। उसने पुलिस की आँख में भी धूल झोंक दी थी। परन्तु इस पाप को मन में छिपा रखने में मुझे बड़ी यन्त्रणा हो रही थी।...कहते-कहते वे मूर्छित हो उठीं। चन्द्रगुप्त उसकी सेवा में लग गये।

दूसरे ही दिन खांडेकर का तार पाकर सुनील पूना पहुँचा। वहाँ पहुँचने पर उसने बतलाया कि यहाँ रामलाल नामक एक व्यक्ति चिकित्सा के निमित्त सिविलियन हस्पताल में लाया गया। जिसकी रूपरेखा चित्रगुप्त बाबू से मिलती-जुलती है। वह धीरे-धीरे आरोग्य हो उठा।

पूना में रेलगाड़ी से उतरकर सुनील खांडेकर के स्थान पर बहुत अधिक रात बीत जाने के बाद पहुँचा था। इससे वह रात्रि उसे वहीं व्यतीत करनी पड़ी। परन्तु उसने एक बन्दी के समान व्याकुलभाव से ही वह रात्रि व्यतीत की। सवेरे दूर से ही देखकर उसने चित्रगुप्त को पहचान लिया। रामलाल नामधारी चित्रगुप्त उस समय एक मोढ़े पर बैठा हुआ था।

सुनील दौड़कर चित्रगुप्त से लिपट गया। आनन्द की अधिकता से अधीर होकर उसने कहा—कहो भाई चित्र! तुम मुझे पहचान नहीं रहे हो? मैं तुम्हारा साथी सुनील हूँ।

चित्रगुप्त को पाकर सुनील को बहुत ही सन्तोष हुआ। इन दोनों के इतने पवित्रतामय सम्पर्क के सम्बन्ध में भी अकारण सन्देह करके सुनीता जो इर्ष्या के मारे जल रही थी, उसकी अवस्था पर विचार करके वह कौतुक का भी अनुभव करने लगा।

परन्तु खांडेकर ने आकर जब कहा—यह ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता कि चालकी के ही कारण चित्रगुप्त रोगी का भाव प्रदर्शित कर रहे हैं। इसके सिवा सुनील बाबू को इस प्रकार के प्रमाण भी मिले हैं जिसके द्वारा सिद्ध होता है कि चित्रगुप्त बाबू निर्दोष हैं। परन्तु इसके नाम वारंट है और मैं खुफिया-विभाग का एक कर्मचारी हूँ, इससे इन्हें गिरफ्तार करने के लिए मैं बाध्य हूं।

चित्रगुप्त को बम्बई ले जाने का निश्चय हुआ। वहीं उसका मुकदमा होने को था। पुलिस के दल के साथ उसे लेकर खांडेकर जिस गाड़ी से रवाना हुआ, उसी गाड़ी से सुनील भी रवाना हुआ। चन्द्रगुप्त और सुनीता को उसने पहले से ही तार दे रक्खा था।

पत्नी की शोचनीय अवस्था के कारण चन्द्रगुप्त स्वयं बम्बई पहुँचने में असमर्थ थे। उन्होंने सुनीता से कहा था कि तुम मेरी ओर से अपने पिता से आग्रह करना कि वे चित्रगुप्त के मुकदमे की पैरवी खूब डटकर करें। उसे छुड़ाने के लिए मैं अपना सर्वस्व बेचने को तैयार हूं। इस मामले की पैरवी के लिए उन्होंने किशोर को विश्वासपात्र नहीं समझा।

बम्बई स्टेशन पर गाड़ी पहुँचते ही सुनील ने खिड़की से झाँककर देखा तो सुनीता एक वृद्ध के साथ प्लेटफार्म पर खड़ी-खड़ी एक-एक डिब्बे पर दृष्टि दौड़ाने का उद्योग कर रही थी। चलती हुई गाड़ी पर से ही उसने उसे नमस्कार किया। मुस्कराहट के साथ उसे नमस्कार का उत्तर देने के बाद ही सुनील गम्भीर हो उठा। बाद को सुनीता के संकेत करने पर उसके पिता ने भी सुनील को नमस्कार किया।

गाड़ी खड़ी होने पर सबसे पहले सुनील उतरा। उसके बाद खांडेकर उतरे। उन सबके बाद पुलिसवालों के साथ में उतरा चित्रगुप्त। सुनील और खांडेकर के अनुरोध से उसे हथकड़ी नहीं लगाई गई थी।

प्लेटफार्म पर पैर रखते ही चित्रगुप्त आँखें फाड़-फाड़कर चारों ओर देखने लगा। उसने कहा—कौन-सी जगह है यह ? यह तो परिचित-सी जान पड़ रही है।

खांडेकर ने कहा—बम्बई है यह। मुंह से अस्फुट स्वर में चित्रगुप्त ने दो-तीन बार मुंह से निकला—बम्बई ? बम्बई ? नाम तो यह जाना हुआ-सा है।

सुनील बढ़कर चित्रगुप्त के समीप पहुँच गया। उसने उससे कहा—हाँ, यहाँ सुनीता देवी का मकान है ! वे तुमसे मिलने आई हैं।

चित्रगुप्त अपनी ही धुन में बकने लगा—सुनीता ! सुनीता ! मधुर नाम है ! शायद कभी का मेरा सुना हुआ है यह नाम।

पिता के साथ आकर सुनीता जब चित्रगुप्त के पास खड़ी हुई, तब चित्रगुप्त ने अपरिचित के समान उनकी ओर एक बार देखा और खांडेकर से बोला—कहाँ जा रहे हैं हम लोग ?

जब खांडेकर चित्रगुप्त को कुछ उत्तर देने ही को था कि सुनीता के पिता ने कहा—इस समय सबको मेरे ही स्थान पर चलना होगा। यहाँ के मैजिस्ट्रेट के यहाँ मैंने चित्रगुप्त की जमानत कर ली है। इससे अब उसे पुलिस के संरक्षण में रहने की आवश्यकता नहीं है। अन्त में पुलिस कर्मचारियों को मैजिस्ट्रेट की लिखित आज्ञा दिखाकर उन्होंने नियमित रूप से चित्रगुप्त को छुड़ाया।

स्टेशन से बाहर आकर सब लोग एक घोड़ा-गाड़ी में बैठे और सुनीता के पिता के बंगले की ओर चले।

किराये की गाड़ी पर जरा ही दूर चलने के बाद सुनीता के घर की भी गाडी आ गई थी; इसलिए उसके पिता ने सुनील को आदेश किया कि तुम चित्रगुप्त और सुनीता को लेकर उस गाड़ी पर बैठ जाओ। चिपलूनकर साहब को लेकर मैं इस गाड़ी से चलता हूँ। इससे इस दूसरी गाड़ी पर सुनील ने सुनीता और चित्रगुप्त को पास-पास बैठाला था, और स्वयं उनके सामने बैठा था। इससे चित्रगुप्त सुनीता की ओर बार-बार ताककर कुछ सोचने-सा लगता, मानों वह कोई भूली-सी बात स्मरण करने का प्रयत्न कर रहा था। उसे ऐसा लग रहा था, मानो जन्मान्तर की कोई क्षीण-स्मृति हृदय में उदित होने को होती है और रह जाती है।

कुछ समय तक सुनीता के पास इस प्रकार बैठे रहने के बाद चित्रगुप्त के मनोभाव में क्रमशः परिवर्तन होने लगा। अब क्षण-क्षण पर एक स्निग्ध संकोच से चित्रगुप्त का मुख लाल हो उठने लगा। रह-रहकर अपांग से सुनीता का मुँह ताक-ताककर वह आनन्दित-सा होने लगा। उसके इस प्रकार के भावान्तर के कारण सुनील को बड़ा ही सुख मिला।

घर पहुँचने के बाद ही सुनीता के पिता ने तार देकर कलकत्ता के नामी-नामी डाक्टरों को बुलाया। उन सबने आकर चित्रगुप्त के स्वास्थ्य की परीक्षा की और सुनील तथा खांडेकर के मुख से महल के अन्धकूप में चित्रगुप्त के बन्दी होने तथा अन्धकारमय सुरंग में झटझटाकर राह खोजने आदि का प्रयत्न करने का हाल बतलाया। अन्त में उन दोनों ने कहा कि मार्ग का अनुसन्धान करते समय चित्रगुप्त सम्भवतः सुरंग के भीतर की धारा में गिर पड़े और बह गये।

सारा विवरण सुनकर डाक्टरों ने कहा कि आत्मरक्षा के सम्बन्ध में अत्यन्त ही निराश हो जाने के कारण चित्रगुप्त को यह स्नायु-सम्बन्धी विकार हुआ है। भाग्य की ही बात है कि यह विक्षिप्त नहीं हुआ। अन्यथा इस प्रकार की अवस्था में मनुष्य का मस्तिष्क विकृत हो जाने की पूर्ण आशंका रहा करती है।

डाक्टरों की व्यवस्था के अनुसार चित्रगुप्त की चिकित्सा होने लगी, जिसके द्वारा वह उत्तरोत्तर स्वास्थ्यलाभ करने लगा। इधर सुनीता के साथ नये सिरे से उसकी घनिष्टता आरम्भ हुई और क्रमशः प्रणय का भी संचार होता गया। कुछ ही समय में वह प्रणय इतना विकसित हो उठा कि वे दोनों ही एक दूसरे के क्षणमात्र के वियोग से भी अधीर हो उठने लगे। इधर सुनील से बातें करते-करते उसे माता-पिता तथा भाई आदि का स्मरण हो आया। अब उसने यह भी अनुभव किया कि यह वही सुनीता है जो पहले से ही मेरे हृदय में अपना साम्राज्य स्थापित कर चुकी है।

सुनीता ने जब देखा कि चित्रगुप्त की स्मृति जाग्रत हो आई है,

तब उसने कलकत्ता चलने का अनुरोध किया। कोमल और शान्त कण्ठ से उसने कहा—चलो, ट्रेन का समय हो गया है, सब लोग तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। हम सब लोग मिलकर कलकत्ते के महल में तुम्हारे माता-पिता के पास जायेंगे।

चित्रगुप्त ने स्पष्ट स्वर से कहा—"माता-पिता के पास कलकत्ता के महल में जायेंगे"—यही कहते-कहते वह सुनीता के पीछे-पीछे घर से निकल गया।

२६

महल में पहुँचने पर चित्रगुप्त यह नहीं अनुभव कर सका कि मैं अपने घर में आया हूँ। उस समय उसकी यह धारणा हो रही थी कि इस स्थान को शायद मैंने कभी स्वप्न में देखा है। इससे विस्मयपूर्ण दृष्टि से चारों ओर ताकते-ताकते वह फाटक के भीतर पैर बढ़ा रहा था। इधर महल से सम्पर्क रखने वालों को चित्रगुप्त के इस प्रकार लौट आने की कोई आशा ही नहीं थी। वे सब सोच रहे थे कि चित्रगुप्त जब इस प्रकार का गर्हित पाप-कर्म करके घर से निकला है, तब वह अपना काला मुख दिखाने के लिये यहाँ आने का साहस कैसे कर सकेगा। परन्तु अकस्मात् उसके आने का समाचार पाकर उन सब ने बहुत ही आश्चर्य का अनुभव किया और उसे देखने के लिये सब लोग आकर एकत्र हो गए।

महल के नौकर-नौकरानियों तथा आस-पास के निवासियों की एक अच्छी खासी भीड़ के सामने से होकर चित्रगुप्त जा रहा था। जिस किसी के सामने वह पहुँचता वही झुककर उसका अभिवादन करता। परन्तु चित्रगुप्त पहले की तरह आदरपूर्वक किसी का नमस्कार स्वीकार नहीं कर रहा था। वह उन सबकी ओर शून्य-दृष्टि से इस प्रकार ताकता, मानों उसका इन सबसे कभी का परिचय नहीं है।

सुनीता आदि के साथ चित्रगुप्त घर में पहुँच गया। उसके वहाँ पहुंचते ही तुलसी ने आकर कहा—मालिकन की अवस्था बहुत ही संकटापन्न है। इससे उन्हें छोड़कर मालिक आ नहीं सकते। उनकी इच्छा है कि आप सब लोग मालिकिन के ही कमरे में चलें।

यह बात सुनते ही चित्रगुप्त को आगे करके सब लोग अन्नपूर्णा के कमरे की ओर चले। तब खांडेकर के पास पहुँचकर तुलसी ने चुपके से उसे सूचित किया कि कौशल्या और रामू भाग निकले हैं। उन्हें खोज-कर गिरफ्तार करने के लिए मैंने एक-एक थाने में तार कर दिया है।

खांडेकर ने कहा—भागकर कहाँ जायँगे ये लोग? ये गिरफ्तार होकर ही रहेंगे। व्यर्थ में भागने का प्रयत्न किया है इन्होंने।

तुलसी ने कहा—साँझ को प्रलाप में मालिकिन ने सारी बातें प्रकट कर दीं। लता के गर्भपात के लिए कौशल्या ने एक दवा लाकर दी है। किशोर बाबू ने वह दवा उसे खिलाई है। उसी से उसकी मृत्यु हुई है। अन्त में रामू, कौशल्या, सत्येन्द्र और माली ने उसकी लाश लाकर चित्रगुप्त बाबू के कमरे में छिपा दी। उन्होंने सोचा कि वे तो लापता हैं ही, इससे उनके कमरे में जब लाश भी निकल आवेगी तब लोग यही विश्वास कर लेंगे कि हत्या के अपराध से बचने के भय से ही वे भाग निकले हैं। उस अवस्था में किशोर बाबू के प्रति किसी को किसी प्रकार का संदेह न हो सकेगा।

तुलसी की बात सुनकर खांडेकर ने कहा—तब तो किशोर बाबू, सत्येन्द्र और माली को भी गिरफ्तार करना होगा।

तुलसी ने कहा—इसकी भी व्यवस्था मैंने कर ली है।

इस प्रकार बातचीत करते-करते वे सब अन्नपूर्णा के कमरे में पहुँचे।

चित्रगुप्त को देखते ही चन्द्रगुप्त दौड़ पड़े। उसे छाती से लगाकर उन्होंने व्याकुलतामय स्वर से कहा—बेटा चित्र, इस जीवन में तुम्हें मैं फिर कभी देख पाऊँगा, इस बात की आशा मुझे नहीं थी। मैंने मन ही मन तुम्हारे ऊपर कितने ही कल्पना-प्रसूत दोष आरोपित किये थे। परन्तु तुम मेरे सत्पुत्र हो, अत्यन्त पवित्र हो, निर्मल हो, तुम्हारे द्वारा मेरा कुल पवित्र हो गया है।

विस्मय-पूर्ण दृष्टि से पिता के मुँह की ओर ताकते-ताकते चित्रगुप्त ने केवल इतना कहा—बाबू जी!

चित्रगुप्त की भाव-भंगी से मालूम पड़ रहा था कि मानो कोई बात इसकी समझ में आ नहीं रही है। यह विश्वास ही नहीं कर रहा है किसी बात पर। यह इसका अपना घर है और ये बाबू साहब इसके पिता हैं, मानो इस बात पर भी इसे सन्देह हो रहा है।

इधर कमरे में इतने आदमियों को आते देखकर अन्नपूर्णा एकाएक चौंक पड़ीं। तड़फड़ाकर वे उठ बैठीं और चिल्लाकर बोलीं—बेटा चित्र मुझे सँभालो, मेरी रक्षा करो। मैंने तुम्हें गर्भ में नहीं धारण किया है। तो भी मैं तुम्हारी माँ ही तो हूँ, बेटा!

पत्नी को उठकर बैठते देखकर चन्द्रगुप्त ने अग्नि को छोड़ दिया और उतावली के साथ जाकर उन्होंने उन्हें पकड़ा। अन्त में बहुत ही कोमल स्वर में वे बोले—तुम आराम से लेट जाओ, चित्रगुप्त तुम्हें देखने आया है।

अन्नपूर्णा ने स्वामी की इस बात पर कर्णपात नहीं किया। आँखें फाड़-फाड़कर कमरे में आये हुये लोगों की ओर ताकते-ताकते भय से व्याकुल कण्ठ से वे बोलीं—बेटा चित्र, हत्या का मिथ्या अपराध तुम्हारे मत्थे मढ़ने का प्रयत्न मैंने किया है, इस अपराध के कारण तुम्हारा साथी सुनील खुफिया-विभाग के कर्मचारी के साथ मुझे गिरफ्तार करने के लिए आया है। तुम मेरी रक्षा करो बेटा, मेरी रक्षा करो···· मैं कैसी भी होऊँ, किन्तु हूँ मैं तुम्हारी माँ। मुझे तुम बचाओ, मेरी रक्षा करो।

ये थोड़े-से शब्द अन्नपूर्णा ने बहुत ही कातर स्वर से निकाले। व्याकुल-भाव से दोनों बाहुओं को सामने की ओर उन्होंने इस प्रकार फैलाया, मानो वे बहुत ही प्रेमपूर्वक उसका आह्वान कर रही हैं। यह देखकर चित्रगुप्त का समस्त अन्तस्थल मातृ-स्नेह से अभिषिक्त हो उठा। तेजी से पैर बढ़ाता हुआ वह माँ के पास पहुँचा और उससे लिपटकर स्निग्ध तथा मधुर स्वर में पुकारने लगा—माँ!

अन्नपूर्णा ने चित्रगुप्त को अपने दोनों बाहुओं में आबद्ध कर लिया। बाद को अपना क्लान्त मस्तक उसके वक्ष पर रखकर वे कहने लगीं—

हम सब लोगों ने मन में यह स्थिर कर रक्खा था कि तुम अब जीवित नहीं हो, इससे किशोर को बचाने के लिए मैंने यह प्रसिद्ध करने की चेष्टा की थी कि लता की हत्या करके ही सम्भवतः तुम भगे हुए हो। परन्तु उस अवस्था में भी ऐसा करना मेरे लिए उचित नहीं था। यदि तुम सचमुच मर गये होते तो हत्या के अपराध का तुम्हारे दन्ड भोगने का तो कोई प्रश्न ही नहीं था, परन्तु इससे तुम्हारा नाम कलंकित हुए बिना न रहता। पुत्र के निर्मल यश पर कलंक की कालिमा फैलाना माता के लिए अत्यन्त ही घृणित कार्य है। ऐसी दशा में मैं यह कहने का साहस कैसे कर सकती हूं कि उस परिस्थिति में मेरा यह कार्य्य निन्दनीय नहीं समझा जा सकता था। परन्तु अब तो भगवान् की कृपा से तुम जीवित अवस्था में लौट आए हो, इससे परिस्थिति ही बिल्कुल बदल गई। अब मैं सच बात कहने के लिए बाध्य हूं, उसके कारण मेरे किशोर को चाहे फाँसी पर ही क्यों न लटकना पड़े। इतनी बात अवश्य है कि लता की हत्या करने का उद्देश्य हम लोगों का नहीं था। वे सब लज्जाजनक बातें मैं तुमसे क्या बतलाऊँ? तुम्हारे बाबू जी को वे मालूम हैं।

एकाएक उत्तेजित हो जाने के कारण अन्नपूर्णा बहुत ही शिथिल हो गई थीं। वे जोर-जोर से हाँफने लगीं। उनका क्लान्त शरीर चित्रगुप्त के वक्ष पर लटक पड़ा।

इस आकस्मिक उत्तेजना के कारण किसी कारण-विशेष से विस्मृति-आवरण में छिपा हुआ चित्रगुप्त का ज्ञान जरा-जरा-सा उन्मेषित हो आया। मृदु और स्निग्ध स्वर में उसने पुकारा—माँ!

अन्नपूर्णा ने भी क्षीण स्वर में उत्तर दिया—बेटा!

मुहूर्त भर सभी लोग चुप थे। इस जरा देर की निस्तब्धता को भंग करती हुई अन्नपूर्णा बोलीं—बेटा चित्रगुप्त, किशोर तुम्हारा भाई है। वह बड़ा ही दुराचारी है। परन्तु फिर भी तुम्हारा यही कर्त्तव्य है कि तुम उसकी रक्षा करो। तुम्हें क्षमा कर देना चाहिए उसे।

अन्नपूर्णा ने चित्रगुप्त को जिस समय देखा था, उससे जरा देर बाद उनकी मूर्च्छा दूर हो गई थी और वे सचेत हो उठी थीं। परन्तु इतनी बातें कह चुकने के बाद उन पर फिर विकार ने आक्रमण किया। वे चिल्ला उठीं—ओह ! ओह ! ओह ! फाँसी ! फाँसी !

"सुनील तो तुम्हारा साथी है बेटा, उससे कहो कि वह इस तरह कसकर गले में फाँसी न लगावे।......अब तो सांस ही बन्द होती जा रही है।"

एक जोर की चीख के बाद अन्नपूर्णा ने तेजी के साथ उठने का उद्योग किया। परन्तु कोई सहारा न पाकर वे झूलकर गिर पड़ीं।

माँ को उठाने के लिए चित्रगुप्त व्यस्त-भाव से हाथ बढ़ाये। परन्तु उस समय वे अचेत हो उठी थीं।

इस आकस्मिक उत्तेजना के कारण चित्रप्गुत की चेतना पूर्णरूप से जाग्रत हो आई थी। आवेग के साथ वह बोल उठा—बाबू जी, देखिए, माँ अचेत हो उठी हैं।

पत्नी को सीधी करके बिस्तरे पर लिटाने का उद्योग करते-करते चन्द्रगुप्त ने व्याकुल होकर कहा—मूर्च्छा नहीं आई है इन्हें ! मृत्यु हो गई है। डाक्टर...।

कमरे के द्वार के पास ही डाक्टर उपस्थित था। उसने आकर अन्नपूर्णा के शरीर की परीक्षा करके कहा—शरीर इनका बहुत ही निर्बल था, इससे अकस्मात अत्यधिक उत्तेजना होने के कारण इनके हृदय की गति रुक गई और इनकी मृत्यु हो गई।

डाक्टर के मुँह से यह बात सुनते ही चित्रगुप्त माँ के बक्ष में मुख छिपाकर अबोध बालक की तरह 'माँ माँ' कहकर रोने लगा।

चित्रगुप्त मानो अपने पुराने मकान में नया जन्म लेकर आया था और वहाँ के समस्त प्राणियों तथा वस्तुओं से नया परिचय प्राप्त कर रहा था। कहाँ क्या है, इस बात का स्मरण उसे नहीं आ रहा था परन्तु जो चीज उसके सामने पड़ती उसे वह पहचान लेता। आदमी भी जो उसके सामने आते वे उसे पूर्व-परिचित से मालूम पड़ते थे। परन्तु किस का क्या नाम है, यह पूछे बिना वह नहीं मालूम कर पाता था। यह बात अवश्य थी कि रात्रि व्यतीत हो जाने पर उषाकाल के आलोक के समान चित्रगुप्त के हृदय में ज्ञान और विवेचना का उन्मेष उत्तरोत्तर होता जा रहा था।

जिन दिनों में महल में चित्रगुप्त के वापस आ जाने उसकी खोई हुई स्मरण-शक्ति के फिर से जागृत होने तथा अन्नपूर्णा का परलोकवास हो जाने के कारण हर्ष और शोक का गंगा-युमना का-सा संगम हो रहा था, उन्हीं दिनों किशोर अन्यत्र विपत्ति के अनन्त सागर में गोते खा रहा था सत्येन्द्र की सहायता से बम्बई में वह घोड़-दौड़ की बाजी जीतने का प्रयत्न कर रहा था। जीत की रकम में से उसने सत्येन्द्र को दस प्रतिसैकड़ा कमीशन भी देना स्वीकार किया था, परन्तु किशोर ने सत्येन्द्र के ऊपर चाबुक का जो आघात किया था, उसका बदला लेने का उसे यही उपयुक्त अवसर मालूम पड़ा। परिणाम यह हुआ कि सत्येन्द्र की विश्वासघातकता की बदौलत किशोर कई हजार की बाजी हार गया।

अपमान, निराशा और मनोवेदना से अभिभूत होकर किशोर भीड़ ठेलकर किसी प्रकार बाहर निकला। इतने में अखबार के हाकर की सुरीली आवाज ने उसका ध्यान आकर्षित किया। हाकर चिल्ला-चिल्ला कर कह रहा था—'कलकत्ता महल का भंडाफोड़!'

उतावली के साथ अखबार लेकर किशोर उस पर दृष्टि दौड़ाने लगा। महल का विस्तृत समाचार पढ़ने के बाद क्षोभ और दुश्चिन्ता के मारे वह अधीर हो उठा। उसके मन में आया कि फांसी के तख्ते पर चढ़कर अपमान के साथ प्राण देने की अपेक्षा तो आत्म-हत्या की शरण लेना कहीं अधिक अच्छा है। इससे होटल में पहुँचते ही विष खाकर सदा के लिए सो जाने में ही मेरा कल्याण है। परन्तु होटल में पहुँचते ही वह गिरफ्तार हो गया, इससे आत्म-हत्या करके अपमान से छुटकारा प्राप्त करने का अवसर उसे नहीं मिल सका।

तारा की हत्या करने तथा उसका उस हत्या का अपराध चित्रगुप्त के मत्थे मढ़ने के विचार से शव उठाकर उसके कमरे में रखने में जिन लोगों का हाथ था।' वे सभी सत्येन्द्र, रामू, कौशल्या, तथा माली, आदि गिरफ्तार किये गये। चित्रगुप्त के साथ ही उन सब पर भी मामला चलाने का निश्चय हुआ।

अन्नपूर्णा के श्राद्ध से निवृत्त होकर चित्रगुप्त पेशी के दिन बम्बई पहुंचा और अदालत में हाजिर हुआ। उसकी ओर से पैरवी करने के लिए कलकत्ता और बम्बई से दो बड़े-बड़े बैरिस्टर बुलाये गये। खुफिया विभाग की ओर से जो कुछ प्रमाण उपस्थित किये गये, उनसे सिद्ध हो गया कि चित्रगुप्त निर्दोष है। इससे वह छोड़ दिया गया। किशोर का एक वर्ष तथा अन्य समस्त अभियुक्तों को छः-छः मास सपरिश्रम कारा-वास का दण्ड मिला। इससे सभी के हृदय में हर्ष और विषाद का प्रकाश और अन्धकार एक साथ सम्मिश्रित हुआ।

चन्द्रगुप्त उस समय बहुत ही दुःखी थे। एक तो पत्नी की मृत्यु हो जाने के कारण वे यों ही शोक से अधीर थे दूसरे छोटे लड़के को कारा-वास का दण्ड मिलने के कारण उन्होंने बहुत लज्जा और अपमान का अनुभव किया। इससे चित्रगुप्त को फिर से प्राप्त कर लेने में उन्हें जो सुख मिला था, वह इस दुःख के नीचे दब गया। मन का यह दुःख कुछ कम करने के उद्देश्य से उन्होंने प्रस्ताव किया कि चित्रगुप्त और सुनीता

का विवाह अब यथासम्भव शीघ्र ही हो जाना चाहिए। परन्तु सुनीता की ओर स्नेहमयी दृष्टि से ताकते हुए चित्रगुप्त ने कहा—नहीं पिता जी यह नहीं हो सकता। छोटा भाई जेल की नारकीय यातना भोगता रहे और बड़े भाई के विवाह का उत्सव मनाया जाय ? यह तो बहुत ही हृदयहीनता का व्यवहार होगा। किशोर को लौट आने दीजिए तब एक एक वर्ष के बाद हम लोगों का विवाह होगा।

अभी एक वर्ष और प्रतीक्षा करनी होगी। सुनीता का हृदय क्षोभ से परिपूर्ण हुआ जा रहा था। किन्तु क्षण ही भर में उसके मन में आया कि चित्रगुप्त का हृदय कितना स्वार्थहीन तथा उदार है। माता के प्रति इनके हृदय में इतनी अपरिसीम भक्ति है, भाई के प्रति इतना अगाध स्नेह है कि अपने सुख और आनन्द को एक वर्ष की लम्बी अवधि तक के लिए टाल देने में ये द्विविधा नहीं कर रहे हैं। मन में यह विचार आते ही इतने उदात्त विचार का पति प्राप्त करने की सम्भावना से अपने आपको वह गौरवान्वित सी अनुभव करने लगी।

अपना विवाह एक वर्ष तक स्थगित रखने का जो प्रस्ताव चित्रगुप्त ने किया उसके कारण सभी लोगों ने मन ही मन उसके महत्व की बड़ी प्रशंसा की। उसके इस निश्चय के कारण सुखी सभी लोग हुए थे परन्तु मुंह से किसी ने कोई भी बात नहीं निकाली। अन्त में सबको मौन देख कर चित्रगुप्त ने कहा—एक वर्ष में सुनील भी अपने लिए एक कन्या खोज लेगा, तब एक ही दिन और एक ही स्थान पर हम दोनों ही का विवाह होगा।

अपने साथी के मुँह की ओर ताककर चित्रगुप्त मुस्कराने लगा। सुनील की ओर ताककर घर के और लोग भी मुस्कराए। सुनील का मुख लज्जा के सुख से उज्जवल हो उठा।

महल के मामले-मुकदमे का झमेला दूर हो जाने पर अतिथि लोग वहाँ से विदा होने लगे। सुनीता अपने पिता के साथ बम्बई चली गई

परन्तु विदा होते समय उन दोनों ने ही अपने-अपने हृदय में एक दूसरे का मलिन मुख अंकित कर लिया। एक वर्ष की लम्बी अवधि उन दोनों ही के हृदय की अधीरता बढ़ा रही थी।

सुनील चित्रगुप्त को छोड़कर कहीं नहीं गया। वह चित्रगुप्त के साथ ही रहने लगा।